जीवो और जीने दो

भगवान महावीर के २५०० वे
परिनिर्वाण महोत्सव का पुण्य प्रसंग
हम सब मे संगठन एव सौहार्द की
भावनाओ को वृद्धिगत करे
तथा
हम उस वीर प्रभु के दिव्योपदेश का व्यापक प्रसार कर सके ।
इन्ही अनन्त हार्दिक
अभिलाषाओ के साथ

जैन वीर सेवा मंडल

भगवान महावीर के चरणो मे नत मस्तक होकर
इस पावन पर्व पर आप सबका हार्दिक
अभिनन्दन करता है ।

केशरीमल दीवान
अध्यक्ष

सुरेशकुमार जैपुरिया
मत्री

श्री जैन वीर सेवा मंडल सीकर (राज.)
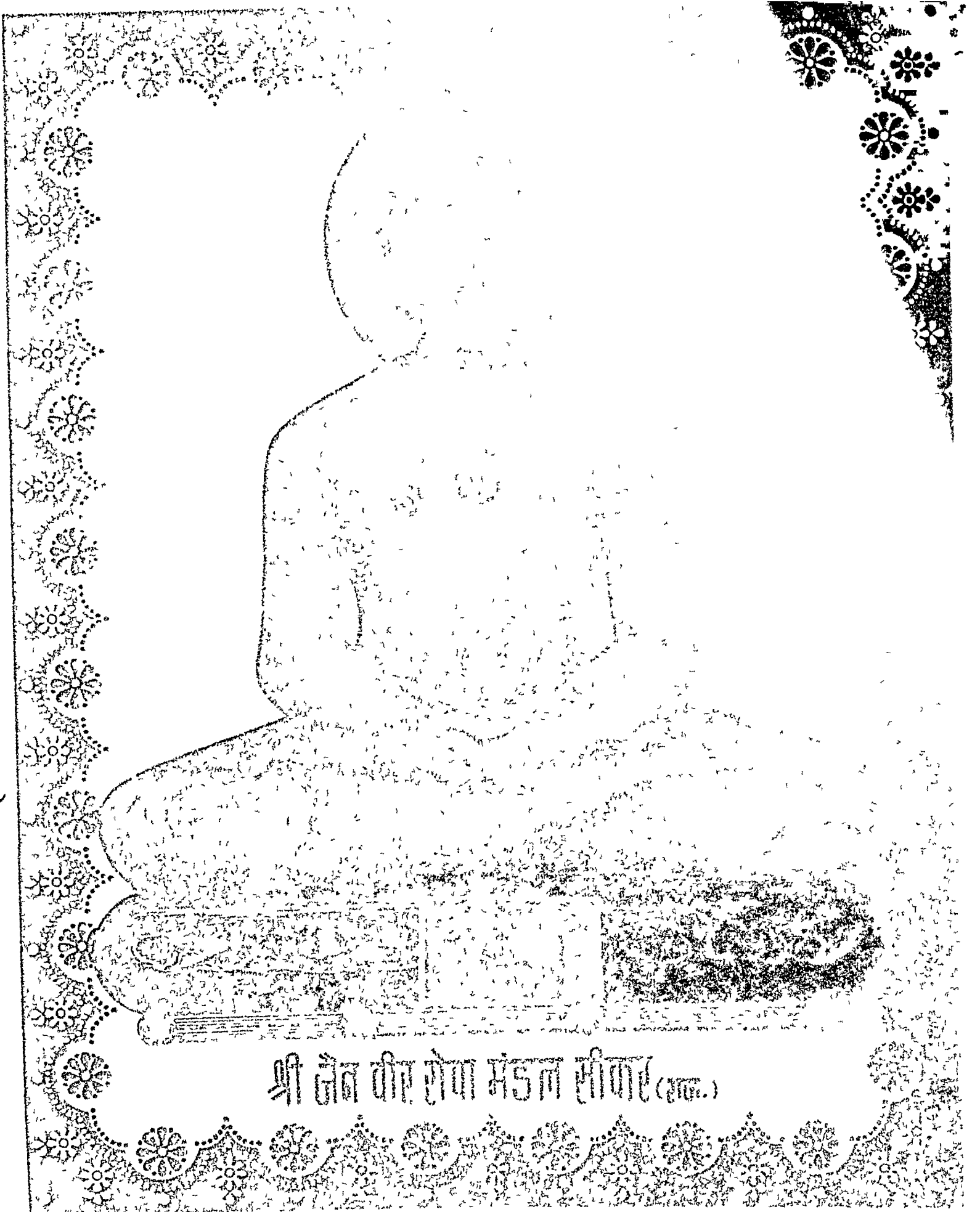
सम्पादक मण्डल

डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल
(प्रधान सम्पादक)

श्रीगोपालजैन

किशनलाल रारा

महेशचन्द्र जैन, जयपुर

विज्ञापन समिति

महेन्द्र कुमार सोनी

अरुण कुमार जैन

महावीर प्रसाद जैन

पदम चन्द जैन

जिनके हम आभारी हैं

श्री बंशीधर शर्मा
(चीफ केशियर, यू. को. बैंक सीकर)

श्री जितेन्द्र कुमार जैन
(मैनेजर, यू. को. बैंक सीकर)

श्री मुरारीलाल अग्रवाल
(मैसर्स अर्जुनलाल मुरारीलाल सीकर)

श्री भंवरलाल जैन
(स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर) [illegible]

ज्ञान दीप की ज्योति जगा दो

अनूपचन्द न्यायतीर्थ, जयपुर

स्याद्वाद सिद्धांत प्ररूपक
सत्य अहिंसा धर्म प्रणेता ।
विश्व शांति के मार्ग प्रदर्शक
अनेकान्त वाणी के नेता ।

छाया है अज्ञान अंधेरा मोह तिमिर को दूर भगादो ।।ज्ञा०

राग द्वेष क्रोधादि कषाए
छल छद्मो का जोर बढा है ।
वैर पाप अभिमान अज्ञता
मुंह बाये पाखण्ड खडा है ।

आशा तृष्णा बहुत बढी है, इच्छाओं की प्यास बुझा दो ।।ज्ञा०

आवश्यक से अधिक परिग्रह
नही पास मे रहने पावे ।
ऊंचनीच औ धनिक दीन का
भेद कभी ना मन मे आवे ।

समता भाव सभी जीवो मे सदा रहे वह मार्ग दिखादो ।।ज्ञा०

आत्म प्रशसा पर निंदा मे
कभी न मै अपना हित मानू ।
निःस्वारथ सेवा ही अपना
सब से बडा धर्म पहिचानू ।।

विश्व-मैत्री पाठ पढा कर मुझको 'अनुपम' राह बता दो ।।

ज्ञान दीप की ज्योति जगा दो ।

महा-मंत्र

णमो अरिहंताणम्, णमो सिद्धाणम्

णमो आइरियाणम्, णमो उवज्झायाणम्

णमो लोएसव्वसाहूणम्

एसो पंच णमोकारो सब्ब पावप्पणासणो

मंगलाणां च सब्बेसि पढमं होइ मंगलं

महावीर-सन्देश (कविता)

—अशोक कुमार छाबड़ा

हिंसा का आदर होता था, दया न मानव को आती थी ।
होम दिये जाते थे प्राणी, कराह नहीं सुनी जाती थी ।।१।।

चैत्र सुदी तेरस के शुभ दिन, कुण्डलपुर मे जन्म लिया ।
मा की ममता भोग राज्य का, तजकर तुम वन मार्ग लिया ।।२।।

बर्बरता पशुता को मिटाकर, तिरने का बन गये सहारा ।
सुखी हुये बस जीव जगत के, जब मानव महावीर पधारा ।।३।।

महावीर मानव थे पहले, वे प्रण से भगवन बन गये ।
जीवन को सुखमय करने को, हमको मार्ग प्रशस्त कर गये ।।४।।

त्याग, ज्ञान, तप, दान, ध्यान मे, निज आतम का भानु उगाया ।
सत्य अहिंसा का अर्चन कर मानवता का पाठ पढाया ।।५।।

प्राण सभी जीवो को प्रियहैं, उन्हे न कभी मारो तुम ।
कष्ट उन्हे भी होता है बन्धु, अनुभव करते हैं जैसा हम ।।६।।

'जीओ और जीने दो' का, सब जग को उपदेश सुनाया ।
अस्त्र अहिंसा हाथ मे लेकर, हिंसा ताण्डव लुप्त कराया ।।७।।

अणुबम उद्जन बम आदि को, नष्ट करो, शान्ति फैलाओ ।
सत्य अहिंसा का अर्चन कर, मानवता का पाठ पढाओ ।।८।।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री वीर सेवा मण्डल सीकर की ओर से भगवान महावीर के 2500 वे निर्वाण महोत्सव की पूर्व वेला पर स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है। आगामी वर्ष भगवान महावीर की निर्वाण शताब्दि का वर्ष होगा इसलिए महावीर के सिद्धान्तो का हम जितना अधिक जन साधारण मे प्रचार करेंगे निर्वाण शताब्दि समारोह मनाने मे हमे उतनी ही सफलता मिलेगी।

आपके इस शुभ कार्य के लिए मैं अपनी शुभकामनाये भेजता हू।

साहू शातीप्रसाद

राज भवन
बैंगलोर
16 सितम्बर 1973

मुझे यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ कि श्री जैन वीर सेवा मण्डल, सीकर, भगवान महावीर के 2500 वे निर्वाणोत्सव के उपलक्ष में एक स्मारिका प्रकाशित करने जा रहा है। भगवान महावीर ने अपने सात्विक जीवन से संसार को 2500 वर्ष पहले ही जो मार्ग-दर्शन दिया, वह आज भी बहुत मूल्यवान है।

स्मारिका की सफलता के लिये मै अपनी शुभकामनायें भेजता हूँ।

(मोहनलाल सुखाड़िया)
मैसूर राज्यपाल

मुख्य मंत्री, मध्य प्रदेश
भोपाल

13 सितम्बर, 1973

मुझे यह जानकर हर्ष है कि भगवान महावीर स्वामी के 2,500 वें निर्वाणोत्सव के उपलक्ष्य मे, श्री जैन वीर सेवा मण्डल, सीकर, एक स्मारिका प्रकाशित करने जा रहा है।

भगवान महावीर स्वामी के उपदेश, भौगोलिक सीमाओं से परे, सम्पूर्ण मानव जाति के लिए कल्याणकारी है।

आप भगवान महावीर के उपदेशो का जन-जन में प्रसार करने मे सफल हों, यही कामना है।

प्रकाशचन्द सेठी

वित्त मंत्री, राजस्थान,
जयपुर

7 सितम्बर 1973

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि श्री जैन वीर सेवा मण्डल, सीकर की ओर से वर्ष 1973-1974 मे भगवान महावीर स्वामी के 2500 वे निर्वाणोत्सव के उपलक्ष मे एक स्मारिका प्रकाशित की जा रही है।

भगवान महावीर भारत के उन महापुरुषो मे से है जिन्होंने बौद्धिक चिन्तन, आत्म विश्वास, धर्म परायणता तथा अहिंसा को जीवन मे उतारने का उपदेश दिया है। आज इस बात की आवश्यकता है कि उनके बताये मार्ग का सही रूप से अनुसरण किया जाय। आशा है यह स्मारिका अधिकाधिक लोगो मे भगवान महावीर के सदेशो का प्रसार करने मे सहायक सिद्ध होगी।

मेरी हार्दिक शुभकामनाएं समर्पित है।

(चन्दनमल वैद)

स्वास्थ्य मंत्री,
जयपुर
राजस्थान

7 सितम्बर, 1973

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि 'श्री जैन वीर सेवा मण्डल, सीकर,' भगवान महावीर स्वामी के 2500 वे निर्वाणोत्सव के उपलक्ष मे एक स्मारिका के प्रकाशन का आयोजन कर रहा है। प्रकाशन की सफलता के लिए शुभ-कामना प्रेषित करता हुआ आशा करता हूं कि उपरोक्त प्रकाशन मे महावीर स्वामी द्वारा उपदिष्ट सिद्धान्तो एव उनके प्रेरणादायक व अनुकरणीय जीवनचरित्र को समाविष्ट किया जाएगा जिससे पाठकगण लाभान्वित होगे।

(हरिदेव जोशी)

नवभारत टाइम्स
7, बहादुरशाह जफर मार्ग
नयी दिल्ली-1

20 सितम्बर, 1973

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि महावीर भगवान के 2500 वें निर्वाण पर आप सीकर से एक स्मारिका प्रकाशित कर रहे हैं। मुझे आशा है आपकी यह स्मारिका अत्यन्त सज्जित रूप मे महावीर भगवान के उपदेशो को प्रकाश मे लायगी।

मैं आपके प्रयत्न की सफलता की कामना करता हूं।

भवदीय,
(प्रकाशकुमार जैन)
सम्पादक

सेठ मूलचन्द सोनी मार्ग
अनोप चौक, अजमेर

18-9-73

विश्ववंद्य भगवान महावीर स्वामी के 2500 वे परिनिर्वाणोत्सव के पावन अवसर पर श्री जैन वीर सेवा मण्डल सीकर के तत्वावधान मे 'निर्वाण' स्मारिका प्रकाशित करने का निर्णय श्लाघनीय ही नही अपितु स्तुत्य भी है। भगवान वीर प्रभु के पावन सिद्धान्त जन-जन तक पहुँचे तथा जनसाधारण उनकी वाणी का हृदयगम कर सके, अतएव स्मारिका सदृश सामयिक प्रकाशन सर्वथा उपादेय है।

विश्वास है स्मारिका में भगवान वीर प्रभु की वाणी का अधिकाधिक लालित्यपूर्ण शैली मे प्रामाणिक सग्रह किया जायगा, जो सतप्त प्राणी को शान्ति-रस का पान कराने मे समर्थ होगा।

मेरी हार्दिक शुभकामनाएं है कि स्मारिका का प्रकाशन सफलरीत्या हो। तथा प्रभु वीर की वाणी का घर-घर मे प्रचार प्रसार हो।

भागचन्द सोनी

अटल बिहारी वाजपेयी
संसद् सदस्य
(लोक सभा)

1, फिरोजशाह रोड,
नई दिल्ली
17 सितम्बर, 1973

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री जैन वीर सेवा मण्डल द्वारा भगवान महावीर के 2500 वे निर्वाणोत्सव के उपलक्ष मे एक स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

आपके प्रयासो की सफलता के लिए श्री वाजपेयी जी की शुभकामना स्वीकार करे।

धन्यवाद।

भवदीय,
(शिव कुमार)
निजी सचिव।

भगवान महावीर के २५००वे निर्वाण महोत्सव के आयोजन की सारे देश मे चर्चा है। राष्ट्रीय स्तर पर, राज्य स्तर पर एव सामाजिक स्तर पर विभिन्न योजनाये बनाई जा रही है, इसलिए इन दो-तीन वर्षो को हम 'निर्वाण महोत्सव योजना वर्ष' के नाम से भी सम्बोधित करने लगें तो कोई अत्युक्ति नही होगी। इन योजनाओ मे से भविष्य मे कितनी योजनाये सफलीभूत होगी यह तो भविष्य ही बतायेगा लेकिन इनसे देश एव समाज की कर्तव्य शक्ति का अवश्य पता चल जायेगा।

राजस्थान मे भी निर्वाण महोत्सव की चर्चा तो पर्याप्त हो रही है लेकिन इस दिशा मे हमने कोई ठोस प्रगति की हो ऐसा कही लगता नही है। योजनाये बनती और बिगड़ती है। आगे बढने का प्रयास किया जाता है लेकिन फिर भी कदम उठते नही है और जहाँ के तहाँ रुके रहते है। प्रचार के नाम पर आज तक हमने कितना कार्य किया है यदि इसका लेखा-जोखा लिया जावे तो उसको देखकर हमे प्रसन्नता नही होगी। अभी तो हमारी गाडी समितियो के निर्माण के चक्कर मे ही उलझी हुई है। लेकिन हमे आशा करनी चाहिए कि राजस्थान निर्वाण महोत्सव के आयोजन मे किसी प्रदेश से पीछे नही रहेगा और यहा के कार्यकर्त्ता एव समाज का प्रत्येक सदस्य महोत्सव को सफल बनाने मे अपना योगदान देगा।

सीकर प्रदेश का राजस्थान मे विशेप महत्व है निर्वाण महोत्सव के आयोजन के लिए वहाँ भी समिति का निर्माण हो चुका है। और वहा के समाज ने निर्वाणोत्सव की पूर्व सन्ध्या मे एक छात्रावास को मूर्त्त रूप दे दिया है। वहा के युवको मे भी उत्साह है और इसी उत्साह के फलस्वरूप 'निर्वाण' स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा हे। स्मारिका प्रकाशन के करीब एक माह पूर्व वहा के युवको का एक दल मेरे पास आया और इसी निर्वाण दिवस पर स्मारिका प्रकाशन करने का अपना विचार रखा और जो कुछ उन्होने सामग्री एकत्रित की थी उसे भी दिखलाया। इन युवको मे श्री महेन्द्र कुमार सोनी का नाम विशेप उल्लेखनीय है। उनके विचार सुनकर मैने कहा कि अभी सीकर के जैन नवयुवक सगठन की ओर से एक 'प्रेरणा' नाम से स्मारिका प्रकाशित हो चुकी है इसलिए १-२ महीने बाद ही दूसरी स्मारिका निकालना सभवतः अच्छा नही लगेगा। लेकिन नवयुवको का विशेष आग्रह था तथा सीकर के प्रमुख समाज सेवी श्री केशरीमल जी दीवान के नेतृत्व मे ये सभी नवयुवक समाज सेवा मे लगना चाहते है यह जानकर हर्ष हुआ। जब कभी मे किसी नवयुवक मे समाज सेवा के कार्य के प्रति उत्साह देखता हूँ तो मुझे बडी प्रसन्नता होती है। क्योकि अधिकाश युवक समाज से दूर भागने वाले होते है।

प्रस्तुत स्मारिका का प्रकाशन भी ऐसे ही नवयुवकों के प्रयासों का मूर्तरूप है इसमें अधिकांश लेख उन लेखकों के हैं जिनके नाम से समाज बहुत कम परिचित है। समाज में नये-नये लेखकों को प्रोत्साहन मिलना चाहिए इसी दृष्टि से स्मारिका में पाठक गण नये-नये नामों को पढ़ेंगे। यद्यपि उनकी लेखनी शैली अभी तक उतनी परिपक्व नहीं हो सकी है जितनी होनी चाहिए लेकिन स्मारिका के माध्यम से ऐसे नये नये लेखकों को प्रोत्साहन मिलेगा और भविष्य में वे अपना लेखन-कार्य जारी रखेंगे इसी दृष्टि से स्मारिका में इन सभी नये लेखकों को स्थान दिया गया है।

स्मारिका का प्रकाशन भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण शताब्दी की पूर्व भूमिका के रूप में है। इससे सीकर जैन समाज को एक नयी प्रेरणा प्राप्त होगी तथा आगामी वर्ष आने वाली निर्वाण शताब्दी में वे ऐसा कोई ठोस कार्य कर सकेंगे जिससे भावी पीढ़ी उन्हें सदैव आदर के साथ स्मरण करती रहेगी। सीकर प्रदेश में जैन समाज के एक प्रमुख अंग खण्डेलवाल समाज की उत्पत्ति हुई थी यह कम गौरव की बात नहीं है। वास्तव में खण्डेला ग्राम में ऐसा कोई स्मारक बनना चाहिये जिसमें आचार्य जिनसेन के साथ-साथ खण्डेलवाल जाति की उत्पत्ति का पूरा इतिहास अंकित हो। इससे हमें भविष्य में इतिहास लिखने में अत्यधिक सहायता मिलेगी। इसी तरह सीकर नगर में प. महानन्द जी एवं अनेक आध्यात्मिक एवं भक्त कवि हो गये हैं। उनके जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व के सम्बन्ध में एक स्वतन्त्र पुस्तक के प्रकाशन की आवश्यकता है। आशा है करेगी। और निर्वाण स्मारिका पर क्रियान्वित की जाने वाली योजनाओं में सम्मिलित करेगी। सीकर प्रदेश में ही सिंघाणा नगर है जहां महापंडित टोडरमल जी ने गोम्मटसार की भाषा टीका समाप्त की थी। उस नगर में टोडरमल जी की स्मृति में कोई स्मारक अवश्य स्थापित किया जाना चाहिए।

मैं उन सभी कृपालु लेखकों का आभारी हूँ जिन्होंने 'निर्वाण' स्मारिका के लिये लेख प्रकाशनार्थ भेजे हैं। कुछ रचनायें समयाभाव एवं स्थानाभाव से प्रकाशित नहीं हो सकी हैं इसके लिए विद्वान लेखक क्षमा करेंगे। मैं सम्पादक मंडल के सभी सदस्यों एवं विशेषतः श्री [illegible] जी जैन का आभारी हूँ जिन्होंने स्मारिका प्रकाशन का सम्पूर्ण कार्य किया है। अन्त में मैं श्री वीर सेवा मण्डल सीकर के उन सभी कार्यकर्ताओं एवं विशेषतः मण्डल के अध्यक्ष श्री [illegible] जी [illegible] तथा श्री महेन्द्रकुमार सोनी का आभारी हूँ जिन्होंने स्मारिका प्रकाशन का गुरुतर कार्य करके युवकों को इस दिशा में कार्य करने का आह्वान किया है।

डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल

कहां क्या देखें

जैन वीर सेवा मंडल

एक परिचय

जैन वीर सेवा मडल की स्थापना का परिचय पाने के लिए हमे गत ४० वर्षों की पर्तो के भीतर भाकना होगा। आज जब उस समय की याद हो आती है तब लगता है कि काल की गति ने राज्य व्यवस्था, समाज व्यवस्था, परिवार व्यवस्था, वैयक्तिक जीवन के ढाचे एव आचार-विचार मे भारी परिवर्तन ला दिया है।

देश मे ब्रिटिश हुकूमत एव इस क्षेत्र मे राजतत्र की रियासती शासन व्यवस्था के उन दिनो मे सीकर जैन समाज के कुछ युवको—मेरे साथियो मे उत्साह एव दृढ सकल्प था, एव थी कुछ कर गुजरने की आकाक्षा। एक-एक हृदय मे अलग-अलग उमडने वाले इस जोश ने एक छोटी सी सम्मिलित शक्ति का मूर्त रूप धारण किया—जैन वीर सेवा मडल नामक सस्था के रूप मे।

पवित्र एव उदार जैन सस्कारो मे पालित पोषित युवामन को लगा कि आज भी कुछ-कुछ वैसा ही करने की आवश्यकता शेष है जैसा अतीत मे जैन महापुरुषो एव अन्य सज्जन साधु महात्माओ ने बराबर किया है। फलस्वरूप अपने ही जीवन को चौतरफ से देखने पर लगा कि अभी जीवहिंसा के अवशेष प्रथाओ के रूप मे प्रचलित है। आसपास के विभिन्न पूजा गृहो एव धर्म केन्द्रो मे प्रचलित बलि प्रथा के विरुद्ध एक विनम्र अभियान लेकर जैन वीर सेवा मडल की युवा टोली सक्रिय हुई। जीण माता एव रीगस भैरोजी के मदिर जो लाखो लोगो की श्रद्धा के केन्द्र है उस समय पशु बलि के प्रमुख स्थल थे।

जैन वीर सेवा मडल ने प्रेम और सद्भाव पूर्वक, धार्मिक एव साम्प्रदायिक सहिष्णुता तथा विभिन्न समाजो मे पारस्परिक सहयोग की वृत्ति का सहारा लेकर उक्त स्थलो पर भारी सख्या मे होने वाली बलि बन्द करवाने मे सफलता प्राप्त की।

'मडल' ने अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु चार मुख्य कार्यक्रम अपने हाथ मे लिये जो इस प्रकार है—

(१) सद्धर्म प्रचार (२) समाज सेवा (३) कुरीति निवारण (४) शिक्षा प्रचार

सद्धर्म प्रचार के निमित्त प्रकाशन, प्रवचन, उपदेशादि के कार्यक्रम आयोजित करना।

समाज सेवार्थ धार्मिक मेलो आदि की व्यवस्था के लिये स्वय सेवको को भेजना आदि। मडल के स्वय सेवको अन्य स्थानो पर व्यवस्था कार्य करके स्वर्ण पदक आदि अनेक बार प्राप्त किये।
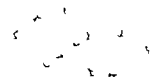
कुरीति निवारण के अन्तर्गत दहेज एवं मृत्यु भोज जैसी कुप्रथाओं के विरुद्ध जनजागरण करना।

शिक्षा प्रचार हेतु विद्यालय एवं पुस्तकालय खोलना। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संस्था ने अपने आरम्भ काल में ही स्व० श्रद्धेय पं० चैनसुख दास जी (जयपुर) की प्रेरणा एवं मार्ग-दर्शन से एक छोटी सी प्राथमिक शाला प्रारम्भ की थी जो आज अपने विकसित रूप में बजाज भवन के निकट श्री दिगम्बर जैन हायर सैकण्डरी स्कूल के नाम से स्थित है एवं नगर को स्थानीय जैन समाज की सुन्दर देन है।

सेवा मण्डल अपने गत ४० वर्षों में जो कार्य कर चुका है उसका पूरा विवरण यहां सम्भव नहीं है किन्तु इतना निश्चय है कि जो कुछ उसने किया उससे अधिक अब उसे भविष्य में करना है। मण्डल के सारे कार्यकर्ता इस बात को जानते हैं। आज भी

तीर्थंकर महावीर एक अनुपम नेता थे, वे अनुभवी मार्ग प्रदर्शक थे तथा जनता द्वारा सम्मानित थे।

महात्मा बुद्ध

महावीरजी की शिक्षाएँ ऐसी प्रतीत होती हैं मानो विजयी आत्मा का विजय गान हो।

इटली के विद्वान डॉ. अल्बर्ज पाञ्जी

२५००वाँ वीर निर्वाण महोत्सव

एक अपील

हमे अपने जीवन काल मे भगवान महावीर के २५०० वे निर्वाण महोत्सव के ऐतिहासिक शुभ अवसर पर सम्पन्न होने वाले पुनीत क्रिया-कलापो का भागीदार होने का गौरव एव पुण्य प्राप्त हुआ है। धर्म-लाभ की इस महान वेला मे मै सम्पूर्ण निष्ठावान एव जागरूक श्रावक समाज का अभिनन्दन करते हुये कामना करता हूँ कि हम सब मिलकर अपने गुरुतर दायित्व को पूरा करने मे सक्षम सिद्ध हो।

सदूर अतीत से चली आ रही पवित्र जैन परम्परा के अनुसार अपने जीवन को अधिकाधिक धर्ममय बनाते हुये हमे वीर-वाणी का ऐसा व्यापक प्रचार-प्रसार करना है कि सम्पूर्ण जगत को अहिसा, अनेकान्त एव अपरिग्रह के कल्याणकारी मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा प्राप्त हो।

इस विराट आयोजन को सफल बनाने के लिये निर्मित केन्द्रीय समिति ने मुझे सीकर सभाग का कार्य सौपा है। सीकर, सुजानगढ, लाडनू, नागौर, कुचामन आदि मुख्य रूप से इस सभागीय क्षेत्र के अन्तर्गत आते है।

सौभाग्य से १०८ आचार्य श्री धर्म सागर जी महाराज का इस अवसर पर सघ सहित सीकर मे चातुर्मास हेतु विराजना स्थानीय समाज के लिये प्रेरणा एव शक्ति का ऐसा सवल केन्द्र सिद्ध हो रहा है कि धर्म-कार्यों मे अपूर्व गति एव अनुपम विश्वास उत्पन्न हो गया है। मुझे विश्वास है कि महाराज श्री के पवित्र सानिध्य से लाभान्वित होकर यहाँ का समाज २५०० वे निर्वाण महोत्सव की कार्य-विधि को सच्ची निष्ठा एव सच्ची लगन से पूरा करेगा। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण वे महत्वपूर्ण कार्य है जो महाराज श्री के पधारने के बाद हो चुके है, हो रहे है और जिनके होने की रूप रेखा बन रही है। इन्ही कार्यो मे एक महत्त्वपूर्ण एव स्थायी योजना छात्रावास की है। श्री महावीर छात्रावास की स्थापना हो चुकी है। आरम्भिक स्तर पर २० छात्रो के भोजन एव आवास की नियमानुकूल व्यवस्था के साथ इस सस्था ने जन्म लेकर समाज एव नगर के एक बहुत बडे चिर-अभाव की पूर्ति की है।

विभिन्न धर्मानुष्ठानो के अतिरिक्त, समाज मे नव चेतना के निमित्त युवा वर्ग का सक्रिय कार्यारम्भ इस अवसर की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। युवा वर्ग का एक ऐसा ही प्रयास 'प्रेरणा' नामक स्मारिका के प्रकाशन के रूप मे सामने आ

चुका है। इसी क्रम मे नगर की सबसे पुरानी एव समाज-सेवा के एक लम्बे इतिहास की धनी सस्था—जैन वीर सेवा मडल, सीकर प्रकाशन की एक व्यापक योजना के अन्तर्गत 'निर्वाण' नामक स्मारिका का अवसरानुकूल प्रकाशन दीपावली पर कर रही है, जो अब आपके हाथो मे है।

मैं सीकर, सुजानगढ, लाडनू, नागोर, कुचामन आदि सभागीय नगरो के समस्त समाज बन्धुओ से हार्दिक निवेदन—एक खुली अपील करना चाहता हूँ कि नगर-नगर, गांव-गांव, घर-घर और व्यक्ति-व्यक्ति के स्तर पर वे पूर्ण जागरूकता के साथ आगे आयें धर्म और समाज की सेवा मे अग्रसर हों, जीवन में धर्म भावना को अधिकाधिक सवतारणा करें और भगवान महावीर के उपदेशों के प्रचार-प्रसार से विश्व के वातावरण को पवित्र बनावें।

अखिल भारतीय भगवान महावीर २५०० वां निर्वाण महोत्सव महासमिति केन्द्रीय समिति, संभागीय समिति आदि के कार्यक्रमों को पूरी श्रद्धा एवं भक्ति से पूरा करें एवं कार्यकर्ताओं को पूरा सहयोग प्रदान करें।

विनीत
दीवान [illegible]
मंत्री
संभागीय समिति, सीकर

आतिथ्य रूप मासर महावीरस्य नग्नहु।
रूपमुपसदामेतत्तिस्रो रात्री सुरासुता॥

यजुर्वेद अध्याय १६ मंत्र १४

निगण्ठो आवुसो नातपुत्तो सव्वञ्ञू सव्वदस्सावी।
अपरिसेसं ञाणदस्सनं पटिजानाति॥

बौद्ध ग्रन्थ मज्झिम निकाय भाग १ पृ. ६२-६३

श्री वीर सेवा मंडल सीकर के पदाधिकारी एवं कार्यकर्ता

श्री दि० जैन सन्मति बालिका विद्यालय, सीकर

भगवान महावीर के २५००वें निर्वाणोत्सव पर कुछ प्रकाशनीय रचनाएँ

कुन्दनलाल जैन

भगवान महावीर के २५००वे निर्वाण महोत्सव का आयोजन बडे धूम-धाम से किया जा रहा है, सचमुच हम लोग है भी बडे भाग्यशाली जो यह शुभ अवसर हम लोगो के सामने आया है। इस पुनीत अवसर पर सस्कृति, साहित्य, इतिहास, धर्म और समाज के उत्थान के लिए जो कुछ भी किया जावेगा वह थोडा ही रहेगा। इस अवसर पर उत्तर भारत मे प्राकृत, सस्कृत, अपभ्र श, हिन्दी आदि भाषाओ मे जैन सत्साहित्य के प्रकाशन की योजनाए तैयार हो रही है जिन पर लाखो रुपये व्यय किए जावेगे। प्रायः सभी की धारणा है कि इस अवसर पर सिर्फ भगवान महावीर से सबधित कथा, आख्यान, स्तुति, पूजा, स्तोत्रादि का ही प्रकाशन हो पर मेरा व्यक्तिगत दृष्टिकोण है कि यह सब तो हो ही इसके अतिरिक्त भी यदि और अन्य श्रेष्ठ रचनाओ का प्रकाशन-प्रसारण हो जाता है तो सस्कृति, साहित्य, धर्म और इतिहास की दृष्टि से बहुत ही अधिक श्रेयस्कर होगा।

जैन साहित्य मे कालिदास ग्रथावली, तुलसी ग्रथावली, जायसी ग्रथावली आदि जैसे ग्र थो की सर्वथा कमी है जहा एक ही आचार्य या कवि की सभी रचनाओ का सकलन एक ही ग्र थ मे उपलब्ध होता हो ऐसा होने से शोधार्थियो को सबधित आचार्य या कवि का भाषा विज्ञान, इतिहास, रचना क्रम आदि दृष्टि से विकासात्मक विश्लेषण और अध्ययन करने मे बडी सुविधा होती है अतः श्रेष्ठ आचार्यो की सभी उपलब्ध रचनाओ का सकलन एक-एक ग्र थावली के रूप मे सकलित होना चाहिए। जो भी ग्र थ प्रकाशित हो उनके मुख पृष्ठ पर "भगवान महावीर ने २५०० वे निर्वाणोत्सव पर प्रकाशित" यह वाक्य अवश्य ही छपा हुआ होना चाहिए।

मैंने दिल्ली के जैन भडारो मे स्थित हस्तलिखित ग्र थो की विस्तृत सूची के लिए विस्तृत सर्वेक्षण किया है उनमे से यहा कुछ अप्रकाशित प्राकृत एव अपभ्र श रचनाओ की सूची रचनाकार एव रचना तिथि के साथ दे रहा हूँ। यद्यपि मेरी जानकारी मे ये सभी रचनाए अप्रकाशित है फिर भी यदि किसी कृपालु पाठक को कोई रचना प्रकाशित प्रतीत हो तो कृपया मुझे सूचित अवश्य ही करे मैं अति आभारी होऊगा। यह सूची साहित्य व उपयोगिता की दृष्टि से तैयार की गई है जो जनसाधारण के लिए उपयोगी हो सकती है, इसमे छोटी-छोटी रचनाए अप्रसिद्ध कवियो एव आचार्यों की जानबूझ कर सम्मिलित की गई है जिससे उनका प्रकाशन हो सके, यही प्रकाशित रचनाए जैन साहित्य के विधिवत् इतिहास लिखने मे सहायक होगी। अत जो सस्था या व्यक्ति जिस रचना मे रुचि रखता हो उसे प्रकाशित कराने का भरसक प्रयत्न करे।

इस अवसर पर एक कमी बहुत अधिक खटक रही है और वह है "जैन साहित्य का इतिहास" नामक एक प्रामाणिक एव वैज्ञानिक ढग से लिखे गये ग्र थ का अभाव। यद्यपि इस दिशा मे वर्णी ग्र थ माला की ओर से रूपरेखा तैयार की गई थी पर वह ग्र थ अब तक तैयार नही हो सका यद्यपि जैन ग्र थो का पर्याप्त मात्रा मे पता चल गया है, फुटकर निबध परिचयात्मक दृष्टि से भी विभिन्न पत्र पत्रिकाओ मे खूब लिखे जा चुके है श्रद्धेय प्रेमी जी, व मुख्तार जुगलकिशोर जी ने इस दिशा मे खूब प्रयत्न किए, प्रेमी जी का "जैन साहित्य और इतिहास" नामक ग्रथ भी प्रचलित है। पर जिस वैज्ञानिक पद्धति एव विधिवत ढग से इतिहास ग्र थ तैयार किए जाते है वैसा "जैन साहित्य का इतिहास" शीर्षक कोई ग्र थ नही है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का "हिन्दी साहित्य का इतिहास" इसके लिए आदर्श हो सकता है, अत इस निर्वाणोत्सव के शुभ अवसर पर इस दिशा मे अवश्य ही प्रयत्न किए जावेगे ऐसी पूर्ण आशा है। मुनि विद्यानंद जी स्वय साहित्यकार है इस दिशा मे उनका ध्यान आकर्षित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। मेरठ मे 'वीर निर्वाण भारती" न्यास की स्थापना उनके प्रयत्नो के फलस्वरूप हो चुकी है, सभव है यह कार्य भी वे करा सकेगें।

इस अवसर पर श्रेष्ठ आचार्यों की श्रेष्ठ रचनाओ के प्रकाशन की योजनाए तो स्वीकृत हो चुकी है विद्वान् लोग अपने-अपने कार्यों मे लग गये है जिनका उपयोग श्रेष्ठ स्तर के बुद्धिजीवी लोग ही कर सकेगे पर गाव का एक सामान्य सा श्रावक इनसे क्या लाभ ले सकेगा यह एक विचारणीय प्रश्न है, अत मेरा विचार है कि श्रद्धालु श्रावकोचित दैनिक आराधना के उपयोग मे आने वाली पूजा, स्तुति, विनती, पद स्तोत्र कथा, चरित्र, आख्यान आदि का प्रकाशन विशेषतया हिन्दी मे नितान्त आवश्यक है। प्राकृत, अपभ्र श एव सस्कृत ग्र थो का प्रकाशन साहित्यिक दृष्टि से भले ही महत्वपूर्ण रहेगा पर ग्रामीण श्रद्धालु श्रावक को तो भगवान महावीर के २५०० वे निर्वाणोत्सव का आभास तो उसी की सरल जन भाषा मे प्रकाशित रचनाओ के आराधन पारायण से ही हो सकेगा। अत विभिन्न प्रकाशन समितिया इस दिशा मे विशेष योजनाए तैयार करे। इसी दृष्टि से यह सूची मैंने तैयार की है, पाठक इसकी उपयोगिता को समझेंगे

इस तरह भगवान महावीर के २५ सौ वे निर्वाणोत्सव पर जितना अधिक अप्रकाशित साहित्य प्रकाश मे ला सकेगे उतनी ही बडी श्रद्धाजलि हम भगवान महावीर के प्रति अर्पित कर सकेगे। आज के इस भौतिकवादी युग मे जहा निराशा, कुंठा और अनैतिकता एव भ्रष्टाचार का बोलबाला है वहा भगवान महावीर की वाणी ही हमे सन्मार्ग पर ला सकेगी तथा हमारे अन्तः चक्षुओ को ज्ञानालोक से आलोकित कर सकेगी। भगवान महावीर की अहिसा, अनेकात एव अपरिग्रह की समन्वित

त्रिधारा जन-जन के मानस को सरस और सुस्निग्ध बना सके इसीलिए उस महाप्रभु के चरणो की शपथ लेकर हम सकल्प ले कि उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर हम निष्ठा और ईमानदारीपूर्वक अग्रसर होते रहेगे।

अपभ्र श रचनाए[1]

आदित्यवार कहा	अज्जरा
अणथमी सधि कहा	हरिश्चन्द्र अग्रवाल शिष्य जीवहा
अणथमी सधि कहा	भगवतीदास स० १६८७
आनदविहि	आनदकवि (महा नदी)
चन्दन षष्ठी व्रत कहा	प० लाखू स० १२७५
कल्याणक रास	विनयचद शिष्य उदयचद
णेमिनाह चरिउ	कवि लाखनदेव स० १२०५
सुकुमाल चरिउ	मुनि पूर्णभद्र शिष्य गुणभद्र
सुलोचणा चरिऊ	देवसेन गणि
चैत्य वारहमासा	ब्र० उदू
द्वादश अणुवेक्खा	अल्ह कवि
जोगी चर्या	कवि मल्हण शिष्य विमल मुनि
जल्हिग अणुवेक्खा	जल्हिग
लक्ष्मी अणुवेक्खा	लक्ष्मीचद
शिलपदेश माल प्रकरण	जयवत्स आचार्य शिष्य जयसिंह मुनि
बावन अक्खरी	मल्हु कवि
इन्द्रचन्द्र गीत	जिनदास
जगतरायगीत	साहणुपाल
कर्मपाथडी	उदयकिमि
नव ग्रह स्तुति	बुधवीरु
नेमीसर णाह पाथडी	कुमुदचन्द्र
पचमीस्तवन	कीर्तिराय
पडित गुरु आरती	मल्हु कवि
पार्श्वनाथ स्तोत्र	अभयदेव
समाधि	चारित्रसेन
समवसरण विचार स्तवन	रत्नकीर्ति शिष्य पूरण भद्र वाचिक
सम्यग्दर्शन पाथडी	कनककीर्ति
सरणावली	साहणुपाल
सीमधर स्तुति	भुवनभूषण
सुव्रतानुवेक्खा	प० जगदेव शिष्य विषय सेन मुनि
सुदर्शन आरती	तिलय कुसुम
वीर जिनस्तुति	अभयदेव
वीर स्तुतिया	विभिन्न कवि
दशलक्षण जयमाल	प० भाव शर्मा
धर्म चक्क पूजा	बुधवीरु
द्वादशी व्रतोद्यापन	धर्मसेन (विजयमूर्ति)
गुरु जयमाल	माणिक्य नदी
कल्याणविधान	विनयचद
मेरुपक्ति पूजा	सोमकीर्ति
मुक्तावली व्रत पूजा	ब्र० जीवधर शिष्य यश कीर्ति
पच परमेष्ठी पूजा	जिनदास कवि
षोडशकरण पूजा	जगतभूषण शिष्य ज्ञानभूषण स० १६८७
चिन्तामणि पार्श्वनाथ पूजा	भ० सोमसेन
निर्वाण पूजा	उदयकीर्ति
शास्त्र पूजा	इमडी भट्ट
षोडशकरण व्रतोद्यापन	सुमति सागर
वहमाण चरिउ	

प्राकृत रचनाएं

सिद्धान्त धर्मोपदेश रत्नमाला	नेमिपद भडारी
सामाचारी वाक्यानि	जिन माणिक्य सूरि नेमिचद सूरि
प्राकृत लक्षण	चन्द्रकवि
वार चरित्रम्	
वीर थुई सुअञ्झयणम्	

---

[1] उक्त रचनाओ के अतिरिक्त पचासो और भी कृतिया है जो अभी तक अप्रकाशित हैं। इसके लिये श्री महावीर क्षेत्र द्वारा प्रकाशित ग्र थ सूचियो के पाच भाग देखने चाहिये।

सम्पादक

जैन धर्म की लोकोपकारिता

० जयनारायण बंसल
हिन्दी विभाग, वी० वी० (वैश्य)
पोस्ट ग्रेजुएट, कॉलेज,
शामली, जिला मुजफ्फरनगर (उ०प्र०)

जैन धर्म का मूल आधार लोक-कल्याण है। जीव को सासारिक कष्टो से मुक्ति दिलाने के लिए ही इसका आविर्भाव हुआ है। जैनाचार्यों ने जो उपदेश दिये हैं और जैन-धर्म के जो सिद्धात प्रतिपादित किए है, वे जन-हित की भावना पर ही आधारित है। यदि उनका सही रूप मे पालन किया जाए तो आज का अशात मानव अपार शाति प्राप्त कर सकता है।

जैन धर्म की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है आचार-विचार का समन्वय। इसी को दूसरे शब्दो मे आचरण (व्यवहार) और ज्ञान (सिद्धात) का समन्वय भी कह सकते हैं। आज के मनुष्य के जीवन की सबसे बडी त्रासदी यही है कि उसके सिद्धात और व्यवहार मे भारी अतर आ गया है। हम सिद्धातो पर जितना ध्यान देते है उतना व्यवहार पर नही। हमारा आचरण कैसा है इसकी हमे चिता ही नही। जैनाचार्यों ने इस बात को समझा कि आचरणहीन ज्ञान और ज्ञान हीन आचरण दोनो व्यर्थ है। इसीलिए महावीर स्वामी ने 'आचार प्रथमो धर्म' का उद्घोष किया।

जैन धर्म मे 'पच महाव्रत' की महिमा गायी गयी है। वे पाँच महाव्रत है—अहिंसा (किसी जीव को न सताना), सत्य (झूठ से बचना और सचाई पर अडिग रहना), अस्तेय (दूसरो की वस्तु या हक न लेना), ब्रह्मचर्य (संयमपूर्ण जीवनयापन करना) एव अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक वस्तुओ तथा धन-सपत्ति का सग्रह न करना और उनके मोह-जाल

मे न फँसना)। इन महाव्रतो का उद्देश्य मनुष्य को आचरणवान् बनाना ही है और आचरणवान् मनुष्य ही आत्म-शुद्धि के द्वारा परम-पद का अधिकारी बन सकता है।

जैन धर्म मे 'अनेकातवाद' और 'स्याद्वाद' की प्रतिष्ठा है। 'अनेकात' का अर्थ है वस्तु का अनेक प्रकार का होना अर्थात् वस्तु की अनेक धर्मिता का ज्ञान 'अनेकात' से होता है, किंतु उन अनेक धर्मो का कथन हम एक साथ एक ही समय मे नही कर सकते। ज्ञान की अपेक्षा शब्दात्मक अभिव्यक्ति सीमित है। अभिव्यक्ति की इसी सीमा को ध्यान मे रखकर जैनाचार्यो ने 'स्याद्वाद' का सिद्धात प्रतिपादित किया जो एकात (केवल यह ही नही) का खडन करके अनेकात (यह और भी) का समर्थन करता है। इस प्रकार 'अनेकातवाद' और 'स्याद्वाद' के सिद्धात यह बताते है कि हम जो कहते है, केवल वही सच नही है, जो दूसरे कहते है, उसमे भी सचाई है। इन सिद्धातो के द्वारा मनुष्य के अहकार की समाप्ति होती है और परस्पर विरोधी विचार प्रस्तुत करते समय चितको की आपस मे टकराने की आशका नही रहती।

इस विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जैन धर्म पूर्णत लोक हितकारी है। उसका लक्ष्य है ससार के आकर्षणो मे फँसकर नाना कष्ट झेलती मानव-जाति को निर्वाण का मार्ग दिखाना।

.. ..और एक रोज रोटी ने चाद को ललकार ही दिया, बोली 'रे निठल्ले बस कर, अपना निर्लज्ज मुँह छिपा। दुनियाँ की जिस प्रशसा को सुनकर तू फूला नही समा रहा है, उसकी जडो मे मेरा ही पराक्रम है। मैं नही रहूँ, तो तेरा प्रशसक यह मानव वर्ग भूखो मर जाये। तू मेरा अहसान मान। झूठी शेखी मत बघार।' चाद ने सुना, तो उसकी मुस्कान और खिल गई—'बोला इतनी बिगडती क्यो है री जग जननी! जरा विचार कर देख, जैसी तू, वैसा मैं। तू भोजन की तृप्ति देती है, मै रूप की। दोनो का अर्पण एक बराबर है! तेरे बिना मनुष्य जीवित नही रहेगा, यह सत्य है। मगर मेरे बिना जीकर भी वह नही जियेगा, यह भी सत्य है।'

वल्लतोल

तीर्थंकर भगवान महावीर

० १०८ मुनी श्री बुद्धि सागर जी

ससार मे भगवान वर्द्धमान ही महावीर कहलाये थे। वह क्षत्रिय राजा सिद्धार्थ के पुत्र थे। वर्तमान विहार प्रदेश के पटना नगर से उत्तर मे वैशाली जन-पद (वर्तमान वसाढ) के मुख्य नगर कुड ग्राम (वसु कु ड) मे उनका जन्म हुआ था। कथा-शास्त्रो से ज्ञात है कि उनके पिता एक प्रतापी राजा थे और पूर्व प्रदेश के महाराजाओ से उनका सम्वन्ध था।

घर और ससार का त्याग करके कुमार वर्द्धमान ने कु डलपुर के पडोस वाले ज्ञात खड वन बाग मे जाकर अशोक वृक्ष के नीचे तप धारण किया था। बारह वर्षो तक उन्होने घोर तपश्चर्या की, कठिन से कठिन वन प्रदेशो मे रहकर दु ख सहे और मानवीय एव अन्य परीषह व उपसर्ग सहे। सर्व प्रकार के काया क्लेश उठाकर उन्होने मनन किया और लोक तथा प्राव्ध विषयो के विचारो का चिंतवन किया। वहुविचार एव चिंतवन करने के पश्चात् उन्हे केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। उनको लोक के स्वरूप का शुद्ध ज्ञान हुआ और निर्वाण के मार्ग का उन्होने पर्दापण किया। जम्भिका ग्राम के पास भृजुपालिका नदी के किनारे शाल वृक्ष की छाया मे उन्हे यह पूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ और भगवान महावीर जिन अर्थात् विजेता हुये। वह अर्हन्त व तीर्थङ्कर कहलाये। तभी से उन्होने भगवान पार्श्व के धर्म को सशोधित करके उसे नया स्वरूप दिया। इस धर्म को प्राणीमात्र को समझना उन्होने अपना कर्तव्य समझा। उनके अतिम जीवन मे उनके पास देव और मनुष्य आये तथा उन्होने सभी को सत्य धर्म का उपदेश दिया। उन्होने सभी प्रदेशो का भ्रमण किया। अनेक स्त्री-पुरुष उनके शिष्य हुये। इस प्रकार तीस वर्षो तक उपदेश देकर उन्होने राजा हस्तिपाल के राजनगर पावापुर से निर्वाण प्राप्त किया।

निस्सदेह भगवान महावीर एक महापुरुष थे। उनके समकालीन मानवो पर उनके मानसिक एव आध्यात्मिक उपदेशो का गभीर प्रभाव पडा। अपने

समय के सभी गूढ प्रश्नो का प्रबल व गम्भीर चिंतन करके समाधान किया। अपने उपदेश मे उन्होने इस और परलोक विषयक समस्याओ को स्पष्ट रीति से परिष्कृत किया।

उन्होने सासारिक जीवन से राजबुद्धि व अपने अति उच्च ज्ञान से सभी को सही मार्ग-दर्शन कराया। भगवान महावीर ने त्यागमय जीवन को कठोर भाव से पाला था। उच्च ध्येय की प्राप्ति के लिए उन्होन जीवन का उत्सर्ग कर दिया तथा विलासित एव वैभवपूर्ण जीवन को छोड दिया। अन्तिम समय तक उन्होने कायाक्लेश सहा और वासनाओ का नाश किया। प्रबल आत्म-सयम का पालन करके उन्होने सर्वोत्तम सिद्धि प्राप्त की। अपने शिष्यो से भी उन्होने वैसा ही जीवन बिताने के लिए कहा। इस प्रकार उन्होने साधु जीवन का स्तर ऊँचा कर दिया। उस समय के अन्य सन्यासी मात्र मुड मुडाते थे किन्तु भगवान महावीर ने सच्चे साधु के लिये केश लुचन करना और समस्त वस्त्रो के परिधान से मुक्त अर्थात् दिगम्बर हो जाना आवश्यक ठहराया। भगवान महावीर की ऊँची भावना गौतम बुद्ध की भावना से निराली थी।

उस समय ब्राह्मणो ने आध्यात्मिक ज्ञान को अपने मडल तक ही सीमित कर रखा था किन्तु महावीर ने ऐसा कभी नही किया। सभी जिज्ञासुओ को महावीर ने उपदेश दिया। अपने उपदेशो का लाभ दूसरो को देने के लिए ही उन्होने सस्कृत भाषा के स्थान पर अर्द्ध मागधी भाषा मे उपदेश दिया। उनके उपदेश को ग्रहण करने वाला जन-समुदाय विशाल था। उनमे श्रोताओ के हृदय को प्रभावित करने की भारी शक्ति थी। उनके श्रोता समाज के सभी वर्गो मे से थे।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य-शुद्र, आर्य आदि जातियो के स्त्री-पुरुप उनके श्रोता भक्त थे। राज-वर्ग के लोग विशेषकर अपने दरबारियो एव योद्धाओ के साथ महावीर का उपदेश सुनने आते थे। जैन शास्त्रो के अनुसार लगभग तेईस राजाओ ने उनका उपदेश सुनकर जैन-धर्म धारण किया था और भगवान की पूजा की थी। विहार करते हुये वे अग की राजधानी चम्पा, विदेह की मिथिला एव मगध की राजगृही आदि अनेक महत्त्वपूर्ण राज्यो की राजधानियो मे पहुँचे और अपनी सद्वाणी से लोगो का हृदय परिवर्तन कर दिया। मगध के महाराजा श्रेणिक बिबसार पहले बौद्ध धर्म के अनुयायी थे किन्तु बाद मे भगवान महावीर से बहुत प्रभावित होकर जैन हो गये। भगवान महावीर को अपने अधिक शिष्य बनाने की इच्छा नही थी, किन्तु वे अपने उपदेशो को चिरस्थायी बनाना चाहते थे।

योजना और व्यवस्था शक्ति के आधार पर उन्होने जिन नियमो को निर्धारित किया वे आज तक भी वैसे ही सचालित बने हुए है। आज भी हमे जैन-साधु उन्ही के नियमो का पालन करते हुये मिलते है जिससे यह प्रकट होता है कि काल का प्रभाव उन पर नही पडा है। आज भी हम इन महापुरुषो की क्षमता को आश्चर्य से देखते ही रह जाते है।

यह ठीक है कि तीर्थकर महावीर के सिद्धातो का बहुभाग साधुओ को लक्ष्य करके ही निरूपित किया गया है किन्तु उन्होने ग्रहस्थाश्रम की आवश्यकता को भी स्वीकारा है। मानव स्वभाव के गहरे अभ्यासी होने के कारण उन्होने यह जान लिया कि बहुत थोडे मानव ही ससार त्याग कर साधु हो सकते हैं। पूर्व तीर्थंकरो ने भी ग्रहस्थो को अपने सघ मे स्थान दिया था वैसे ही महावीर ने भी ग्रहस्थो के लिए अपने सघ मे स्थान रखा। उन्होने ग्रहस्थ के लिए मुख्य व्रतो को ऐसे स्थूल रूप मे रखा कि कोई भी ग्रहस्थ ससार मे रहते हुए भी सुविधापूर्वक उनका पालन कर सके।

इन व्यावहारिक नियमो तथा ग्रहस्थ एव साधु

मे निकटतम सम्बन्ध होने के कारण जैन-धर्म का प्रचार द्रुत गति से हुआ। सभी का यह मत है कि भगवान महावीर ने किसी नये तत्व दर्शन की स्थापना नही कि बल्कि भगवान पार्श्वनाथ के ही दर्शन का विश्लेषण करके सघ को व्यवस्थित किया।

भगवान महावीर मात्र मानव के ही नही अपितु प्राणी मात्र के धर्म गुरु थे। आज भारत की भूमि पर मानव अपने चाल-चरित्र को बदनाम करता जा रहा है। आज का युवक अपना लक्ष्य भूलकर पाश्चात्य की नकल कर रहा है। भारत की सस्कृति को दफनाया जा रहा है और भौतिकवाद का ढिंढोरा पीट रहा है। हम इस बात को नही समझ रहे है कि हम किस देश मे पैदा हुये है और यहाँ की सस्कृति क्या है, और हमारे आदर्श कौन है ?

आओ, आज हम प्रतिज्ञा कर ले भगवान महावीर के आदर्शों का पालन करते हुए अपना समस्त जीवन इन दीन दुखियो की सेवा मे गुजार देंगे, तभी हमारा यह २५०० वा निर्वाण महोत्सव सफल है, अन्यथा मात्र एक ढोग बनकर रह जायेगा।

एक दिन उस नन्ही कोपल ने अपनी डाली से पूछा—"क्यो मुझे बार-बार अपनी गोद मे झुला-झुला कर परेशान करती हो। क्या यह तुम्हारा ममत्व है ? भूल न करो, बुढी मा, तुम्हारे बिना भी मै आराम से रह सकती हूँ।" डाली ने कोपल को पुचकारा और नेह निष्ठ भाव से बोली—"यह तुम्हारा अस्वीकार ही तो मेरे प्यार को भरता है। कौन मा इस अस्वीकार के लिये नही तरसती ?"

रवीन्द्रनाथ टैगोर

लाड़नूं का भव्य प्राचीन मन्दिर

आचार्य श्री १०८
धर्मसागर जी महाराज
का ससंघ केशलोंच का
सामूहिक दृष्य, सीकर

विश्व बन्धु

० लक्ष्मी चन्द 'सरोज' एम० ए०
बजाजखाना, जावरा (म० प्र०)

पुत्र-स्वर्ग चाहिये हो तो
यज्ञ करो वलि दो ग्राहुति मे
स्वर गू जा यह धरा गगन मे
स्वार्थ पूर्ण ग्रपने कु काम को
जान गया जरा एक मिनट मे

× ×

विश्ववन्धु ने सुना कान से
कहा-बना ग्ररि जीव जीव का
सोचा-मति मन वाला मानव
ग्राड धर्म की लिये रचे यह
ढोग भयानक
फिर मानस मे पशुता जागी
पशुता ग्राई मठ-वेदी पर
ग्रौर हो गया उसके ग्रागे
धर्म-मूर्त्ति का मुखडा पीला
चले धार्मिक जन दीवाने
लप लप करती ले तलवारे
काट दिये पशु शत वेदी पर
स्वार्थ साधते भूल गये वे
जीव तुल्य सब ही ससृति के
गू ज गया शखो की ध्वनि मे
पुत्र-स्वर्ग चाहिये हो तो
यज्ञ करो बलि दो ग्राहुति मे

× ×

दहल गया क्रन्दन को सुन कर
ग्रनन्त नील ग्रम्बर का ग्रन्तर
पूछा उसने वसुधा से फिर
मै जब सजग खडा पहरे पर
क्या ग्ररि-दल ने मेरे दृग मे
धूल झौक कर धावा मारा
प्रभु-प्रतिमा पर
मठ-वेदी पर
कब-कैसे-क्यो
कहो किधर से ?
बोली वसुधा ग्राँसू भर कर
गगन न पूछो इसका उत्तर
किसका साहस तुम्हे छेडकर
धावा करता, प्रभु-प्रतिमा पर
पर मनु की ही बुद्धि बुरी है
धर्म धरा पर भाई भाई
लडते बनकर क्रूर कसाई
भूल मनुजता पशुता के बस
उनने ये ग्रावाज लगाई
पुत्र-स्वर्ग चाहिये हो तो
यज्ञ करो-बलि दो ग्राहुति मे

× ×

विश्वबन्धु ने पूर्ण ज्ञान पा
साहस भर कर सबके सम्मुख

आंखो वाले अन्धो को
बढा वचने विश्वबन्धु वह
युग परिवर्तक
उम्र बहत्तर वर्षों वाला
सिद्धार्थ हृदय त्रिशला प्यारा
जिस पर सुर-सर खग पशु मन ने
अपना प्रियतम सब कुछ वारा
चला डुबाने अपने बल
उनके पापो की गठरी
लेकर सम्बल सत्य-अहिंसा
वैशाली का वैभव तज कर
अगर लेश हो लाज हृदय मे
विश्व व्यक्तियो, सबल शक्ति हो
गले मिलो फिर
जिससे कुछ दिन और रह सके
जग मे जीवित सत्य अहिंसा
जिनके अगणित उपकारो का
मूल्य नही कुछ निकट तुम्हारे
सोचो समझो
विश्वबन्धु की अमित देन को
जो गाधी की वाणी मे भी
होगा याद अभी भी तुम को

जो पथिक बिना पथिय लिये ही लम्बी यात्रा पर चल पड़ता है, वह आगे जाता हुआ भूख तथा प्यास से पीड़ित होकर अत्यत दुखी होता है।

ससार मे चार साधनो का मिलना बहुत दुर्लभ है—मनुष्यत्व, धर्म-श्रवण, श्रद्धा और सयम मे पुरुषार्थ।

भगवान महावीर

प्रस्तुत लेख मे वर्तमान भारत मे नैतिक पतन की ओर पाठको का ध्यान दृष्टव्य है। जैन बन्धुओ को इस पावन पर्व पर इस विषय को गभीरता से लेकर राष्ट्र को नई दिशा देनी चाहिए।

—सम्पादक

जैन युवकों को संदेश

मनुष्यो का शरीर मुख्य रूप से तीन अवस्थाओ मे से गुजरता है—बाल्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था। इन तीनो मे सर्वश्रेष्ठ युवावस्था है।

इक्षु मे जिस प्रकार ऊपर का और नीचे का भाग अनुपयोगी होता है, उसी प्रकार मानव प्रर्याय का प्रथम और अन्तिम भाग (अलौकिक और पारलौकिक दोनो ही कार्यों के लिए) अनुपयोगी है।

रत्नो मे सर्वश्रेष्ठ रत्न (हीरा) है, गतियो मे उत्तम मनुष्यगति, शरीर के अङ्गो मे श्रेष्ठ मस्तिष्क है और अवस्थाओ मे सारभूत युवावस्था है क्योकि इसी अवस्था मे कार्य करने की क्षमता रहती है। यदि युवावस्था इतनी विशेष है तो उस अवस्था के कर्तव्य भी उतने ही विशेष होगे। युवको के ऊपर अनेक कतव्यो का भार रहता है। अत उन्ही कर्तव्यो का विचार यहाँ किया जा रहा है —

१ **आत्म कर्तव्य :**—प्रथम अपनी आत्मा का कर्तव्य अर्थात् जिससे आत्मिक उत्थान हो सके, उसके गुणो का विकास हो, उसके लिए क्या करना चाहिए ? तो उसका उत्तर यह है कि व्यसनो मे नही फसना, कुसगति से बचना अर्थात् जिन कार्यो से आत्मा को दुर्गति मे जाना पडे उनसे बचे रहना आत्म कर्तव्य ह। जैन धर्म जिन कार्यों का निषेध करता है वे अपने निजी उद्धार के लिए हैं। वर्तमान मे युवक प्राय आत्म विमुख होते जा रहे हैं। उनका अधिक समय निद्रा, कलह, व्यर्थ का वार्तालाप, सिनेमा, अश्लील गीत श्रवण व व्यर्थ का गदा साहित्य पढने मे व्यर्थ होता है। यह बात जरूर है कि इन कार्यो के करने मे उसका खुद का इतना अपराध नही है जितना कि सिनेमा और शिक्षण प्रणाली का है। आत्म कर्तव्यनिष्ठ युवको की दिनचर्या, प्रात. शरीर क्रिया से निवृत्त हो भगवत् पूजा और स्वाध्याय करे। फिर आजीविका के कार्य

[illegible] करना चाहिए। भोजन मे अभक्ष्य नही होवे, रात्रि भोजन तो स्वास्थ्य और धर्म दोनो दृष्टि मे ही त्याज्य है। कहा मे युवक तो जानबूझकर साधन उपलब्ध होते हुये भी रात्रि मे भोजन किया करते है।

रात्रि को सिनेमा, व्यसन व व्यर्थ की बातो मे समय न गमावें किन्तु उस समय को सद्ग्रन्थो के मनन करने मे बितावें। खेद के साथ कहना पडता है कि व्यर्थ के उपन्यासादि, गदे साहित्य पढने मे रात्रि की रात्रि बीत जाती है किन्तु धर्म ग्रन्थ पढने के लिए समयाभाव की दलील दी जाती है कि कब शास्त्र पढे, हमे तो समय ही नही मिलता।

शरीर को व्यायामादि के द्वारा सुदृढ एव सुडौल रखना भी युवको को आवश्यक है क्योकि युवावस्था मे यदि शरीर स्वस्थ न रहा तो आगे की जीवन चर्या कठिन होगी। व्यायाम-कसरत भारतीय पद्धति से होना चाहिए न कि पाश्चात्य पद्धति से। योग्य व्यायाम के अभाव मे आज युवावर्ग जरा ग्रस्त जैसा दिखाई देता है, उनके नेत्रो मे उपनेत्र लगे हैं, हाथ-पैरो मे मजबूती नही है। सुदृढ वक्षस्थल वाले युवको का अभाव सा हो गया है। ऐसे शरीर से क्या धार्मिक कर्तव्य करेंगे और क्या देश सेवा ही कर सकेंगे?

२. **धर्म कर्तव्य** —धर्म कर्तव्य और आत्म कर्तव्य दोनो कुछ एक से हैं। धर्मायतन करना, जो मन्दिरादि स्थान हैं उनकी सुरक्षा करना, व्यवस्था करना, साधु सेवा, शास्त्र भडारो की रक्षा आदि कार्य युवको द्वारा ही सभव हैं। किसी मनुष्य के ऊपर आर्थिक एव मानसिक आपत्ति आने पर उसे सहायता देना, आपत्ति को दूर करना यह भी एक बडा धर्म है। आज भारत मे ऐसे लोग भी है जिन्होने विपत्तावस्था मे तग आकर अपना धर्म परिवर्तन तक कर लिया है। आज कोई स्त्री यदि छोटी अवस्था मे विधवा हो गई तो उसको सहायता और सलाह ऐसी देंगे जिससे कि उस विधवा का यहा इस लोक मे शीलभ्रष्ट और अध.पतन हो जाये और परलोक मे अनगिनत वर्षो तक दु ख उठाना पडे। यह वही देश है जहाँ अपनी शील की रक्षा के लिए हजारो वीरागनाओ ने जौहर कर दिखाया था और आज उसी देश के युवक विधवा उद्धार का मीठा सुहाना नाम लेकर उनके शील पर कुठाराघात कर रहे है और युवतियाँ भी उनके जाल मे फँसती जा रही हैं। यह उद्धार का मार्ग नही अपितु पतन का मार्ग है। यदि विधवाओ के प्रति आज के युवको मे जरा सी भी सहानुभूति है तो उन्हे चाहिए कि उन विधवाओ को जीने का सहारा दे, उन्हे धर्म मार्ग मे लगावें, समाज मे रहने के लिए आदर का स्थान दे। कभी-कभी अखबारो या पत्रिकाओ मे सिद्धातो का घात करने वाले प्रसग आते हैं तो युवको को चाहिये कि उनका प्रतिकार करें।

३ **कुटुम्ब कर्तव्य** —कुटुम्ब के प्रति युवको के क्या कर्तव्य है? यह भी समझना होगा। घर मे माता-पिता, चाचा आदि बडे जन है उनके साथ विनय का बर्ताव हो। माता-पिता खास करके माता अपने पुत्र का पालन जिस कष्ट के साथ करती है उन कष्टो को जब वह बालक युवक होता है तब भूल जाता है। छोटा बच्चा जब किसी प्रकार के रोगादि से पीडित हो जाता है तब सारी-सारी रात माता की जागरण मे व्यतीत हो जाती है। छोटे बच्चे की माँ सभा-सोसायटी, गुरु-सेवा, पूजा, स्वाध्याय आदि से तो वचित रह ही जाती है लेकिन साथ ही साथ उसको अपने बहुत से शारीरिक सुखो का भी त्याग करना पडता है। शायद इसी कारण से भारतवासियो ने उसके उपकार के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मान का प्रथम अक्षर 'माँ' का प्रयोग करके उसको सम्मानित किया है। युवको को चाहिए कि वे कभी भी माता-पितादि के धार्मिक आचार-विचार मे बाधा न पहुचावें। उनके व्रत नियम निभावें।

(टोडारायसिंह ग्राम मे एक जैन श्राविका विधवा थी। उसने अपने दो बालको को कई प्रकार के सकटो का सामना करके पढाया। उनमे से एक विशेष बुद्धिमान था। कुछ वर्षो मे वह महाविद्यालय की अतिम परीक्षा मे प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होकर कही पदाधिकारी हो गया। उसकी माँ व्रतिक ब्रह्मचारिणी, शुद्ध भोजन करने वाली थी। वह युवक इतना पढा हुआ होकर भी सवेरे उठकर स्नानादि करके शुद्ध वस्त्रो से पानी लाकर देता, प्रवास यात्रा मे भी यही क्रम चलता। जब वह कालेज से पढकर लौटता तथा घर मे आकर माँ के साथ शुद्ध आटे के लिए चक्की पीसने बैठता तब अनायास ही पडौसियो के मुख से प्रसशात्मक शब्द निकल पडते।)

कुटुम्ब के पालन-पोषण मे खास तो धनोपार्जन है। यदि धनोपार्जन करते समय निम्न श्लोक याद रखे तो सारे धार्मिक और राज्य सम्बन्धी नियमो का पालन हो जाता है।

"अकृत्वा परसन्तापमगत्वा खलनम्रताम्।
अत्याक्त्वा सता वर्त्मयत् स्वरूपमपि तद् बहु॥"

अर्थात् दूसरो को बिना सताप उपजाये, दुष्टों के बिना अधीन हुए एव सत्य पथ को छोडे बिना जो कुछ भी धन साथ है, वह हमारे लिए बहुत है।

४. **देश कर्तव्य** :—भारत देश अहिंसा और आध्यात्म प्रधान देश है। यहाँ की नैसर्गिक रचना ही ऐसी है। इस देश के प्रति हमारा कुछ कर्तव्य है तो वह यह है कि इसकी मुख्य-मुख्य विशेषताओ को सुरक्षित रखना, शत्रुओ के आक्रमण से इसकी रक्षा करना, देश के धार्मिक, आर्थिक, नैतिक व्यवस्थाओ का नाश करने वाले कृत्यो से इसे बचाना हमारा कर्तव्य है। अपने देश की वेश-भूषा, खान-पान, धर्म आदि को हम यदि दूसरो को नही दे सकते तो कम से कम इन चीजो को अपने देश मे तो कायम रखे। आज का युवक भारतीय वेश-भूषा पहनने मे लज्जा का अनुभव करता है। भडकीले वेश और हाव-भाव मे मानो स्त्रियो के साथ होड होने लगी है। हम तो अपने देश मे ही अपना वेश नही रखते है तब तो यह कहना ही पडेगा कि वे विदेशी हमारे से अधिक कितने देश भक्त होगे जा कि परदेश मे आकर भी अपना वेश नही बदलते।

आज युवको को भारतीय पद्धति के अनुसार हाथ-पैर धोकर चौके मे भोजन करना पसन्द नही है। वे चाहे जहाँ खडे बैठे हो, होटल, बीच बाजार मे, कमरे मे टेबल कुर्सी पर जूते चप्पले पहने, कॉच या चीनी मिट्टी के बर्तन मे चम्मच से अभक्ष्य भोजन करना पसद करते है। और यदि ऐसी व्यवस्था नही होती तो अपने आपको हीन समझते है। समझ मे नही आता यह क्या देश भक्ति है? भई यह तो पर-देश भक्ति है।

नैतिक पतन की तो सीमा ही नही उच्च पदाधिकारियो से लेकर निम्न श्रेणी के कर्मचारियो तक मे भ्रष्टाचार व रिश्वत खोरी का बोल-बाला है।

देश के प्रति हमारा यह भी बहुत बडा कर्तव्य है कि इसका नैतिक पतन न होने देवे। तथा अपनी आवश्यकताओ मे (शृंगार, चाय, सिनेमा, सिगरेट, पान आदि) कमी करके देश को आर्थिक सकट से विमुक्त करे।

इस प्रकार धर्म, समाज, देश आदि की सुरक्षा युवको के अधीन है। अत युवको को चाहिए कि वे अपने इन विशाल कर्तव्यो को समझकर इनमे धर्म से अविरुद्ध होकर प्रवृत्ति करे क्योकि देश, कुटुम्ब और समाज सम्बन्धी कार्यो मे धर्म की सुगधि से ही सुवास है अर्थात् यह सब कर्तव्य धर्म का नाश न करते हुए करेंगे तो सफल है, स्वपर हितकारी है, अन्यथा तत्काल भले ही सुन्दर लगते हो किन्तु धर्म विहीन कृत्यो से स्थायी हित और सुख-शान्ति नही हो सकती।

(इति भद्रम भूयात्)

जैन धर्म मे जीव का स्वरूप

० डॉ० रमेशचन्द्र जैन,
वर्द्धमान कॉलेज, विजनौर, (उ० प्र०)

जिसमें चेतना अर्थात् जानने देखने की शक्ति पाई जावे उसे जीव कहते हैं।[1] जीव की इस जानने देखने की शक्ति को ही उपयोग कहते हैं।[2] जो उपयोग साकार है अर्थात् विकल्पसहित पदार्थ को जानता है उसे ज्ञानोपयोग कहते हैं और जो अनाकार है—विकल्परहित पदार्थ को जानता है उसे दर्शनोपयोग कहते हैं। घट पट आदि की व्यवस्था लिए हुए किसी वस्तु के भेदग्रहण करने को आकार कहते हैं और सामान्यरूप ग्रहण करने को अनाकार कहते हैं। ज्ञानोपयोग वस्तु को भेद-पूर्वक ग्रहण करता है इसलिए वह साकार-सविकल्पक उपयोग कहलाता है और दर्शनोपयोग वस्तु को सामान्य रूप से ग्रहण करता है इसलिए वह अनाकार अविकल्पक उपयोग कहलाता है।[3]

शङ्का-आत्मा अनेकान्तमय है तथापि उसे ज्ञान मात्र क्यो कहते हो ? आत्मा मे ज्ञान गुण ही नही अपितु श्रद्धा, चारित्र, सुख, अस्तित्व, जीवत्व, प्रभुत्व आदि अनन्तगुण विद्यमान है तथापि आत्मा ज्ञान-मात्र है ऐसा कहने का क्या कारण है ?

समाधान–जगत मे लक्षण द्वारा लक्ष्य की पहिचान कराई जाती है। आत्मा का लक्षण ज्ञान है, उस ज्ञान लक्षण द्वारा ही आत्मा पहिचाना जाता है। शरीरादि तो आत्मा से अत्यन्त भिन्न हैं, इसलिए शरीर आत्मा का लक्षण नही है और रागादि भाव भी आत्मा के स्वभाव से भिन्न है। ज्ञान ही आत्मा का विशेष गुण है, इसलिए वही आत्मा का लक्षण है। ज्ञानगुण स्वपर को जानता है, आत्मा के अतिरिक्त अन्य किसी द्रव्य मे ज्ञानगुण नही है और आत्मा के अनन्तधर्मो मे भी एक ज्ञानगुण ही स्वपर प्रकाशक है, इसलिए वह असाधारण (विशेष) है, ज्ञान के अतिरिक्त श्रद्धा, चारित्र आदि गुण निर्विकल्प रूप है अर्थात् वे अपने या पर को नही जानते है, मात्र ज्ञान गुण ही अपने और पर को जानता है इसलिए आत्मा ज्ञान मात्र है ऐसा कहकर

उस ज्ञानगुण द्वारा आत्मा की पहचान कराई जाती है ।[४]

शङ्का–आत्मा तो ज्ञान के साथ तादात्म्यरूप से एकमेक है, पृथक् नही है इसलिए ज्ञान का सेवन करता ही है तो फिर ज्ञान की उपासना करने का उपदेश क्यो दिया जाता है ?

समाधान–ऐसा नही है, यद्यपि आत्मा ज्ञान के साथ तादात्म्य स्वरूप है तथापि एक क्षण मात्र भी ज्ञान का सेवन नही करता, क्योकि स्वयबुद्धत्व अथवा बोधितबुद्धत्व कारणपूर्वक ज्ञान की उत्पत्ति होती है अर्थात् आत्मा स्वभाव से सदैव ज्ञान स्वरूप होने पर भी पर्याय मे अनादि से अज्ञान का सेवन कर रहा है, किन्तु ज्ञानस्वभावोन्मुख होकर पर्याय मे एक क्षण भी उसका सेवन नही किया और जब तक पर्याय मे ज्ञानस्वभाव का सेवन न करे तब तक अज्ञानी है, जब अन्तरोन्मुख होकर ज्ञानस्वभाव मे एकाकार करके उसका सेवन करे तब आत्मा ज्ञानी होता है । इस प्रकार पर्याय मे ज्ञान नया प्रकट होता है ।[५] इसी को दूसरे रूप मे प्रवचनसार मे कहा है कि जीव परिणमन स्वभावी होने से जब अशुभ या शुभरूप परिणमन करता है तब अशुभ या शुभ होता है और जब शुद्ध स्वभावरूप परिणमित होता है तब शुद्ध होता है ।[६] आत्मा सर्वथा कूटस्थ नही है किन्तु स्थिर रहकर परिणमन करना उसका स्वभाव है, इसलिए वह जैसे जैसे भावो से परिणमित होता है वैसा ही वह स्वय हो जाता है । जैसे स्फटिकमणि स्वभाव से निर्मल है तथा जब वह लाल या काले फूल के निमित्त से परिणमित होता है तब लाल या काला होता है । इसी प्रकार आत्मा स्वय शुभ है तथा जब मिथ्यात्वादि पाँच प्रत्ययरूप अशुभोपयोग मे परिणमित होता है तब स्वय ही अशुभ होता है ।[७] इस ससार मे जिनके मत मे आत्मा ज्ञान प्रमाण नही है उनके मत मे वह आत्मा अवश्य ही ज्ञान से हीन अथवा अधिक होना चाहिए । यदि वह आत्मा ज्ञान से हीन हो तो वह ज्ञान अचेतन होने से नही जानेगा और यदि ज्ञान से अधिक हो तो वह आत्मा ज्ञान के बिना कैसे जानेगा ?[८]

जीव कर्त्ता है, भोक्ता है, शरीर परिमाण है, अनेक गुणो से सयुक्त है, कर्मो का सर्वथा नाश करने पर ऊर्ध्वगमन करना उसका स्वभाव है और दीपक की तरह सकोच और विस्तार रूप परिणमन करने वाला है ।[९]

जीव के पर्यायवाची शब्द और उनकी सार्थकता—

जीव प्राणी, जन्तु, क्षेत्रज्ञ, पुरुष, पुमान, आत्मा, अन्तरात्मा, ज्ञ और ज्ञानी ये सब जीव के पर्यायवाची शब्द है ।[१०] चू कि यह जीव वर्तमान काल मे जीवित है, भूतकाल मे जीवित था और भविष्यत्-काल मे भी अनेक जन्मो मे जीवित रहेगा इसलिए इसे जीव कहते है । सिद्ध भगवान अपनी पूर्वपर्यायो मे जीवित थे इसलिए वे भी जीव कहलाते है । पाँच इन्द्रिय, तीन बल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये दश प्राण इस जीव के विद्यमान रहते है । इसलिए यह प्राणी कहलाता है ।[११] प्राण, इन्द्रिय, बल, आयु तथा उच्छ्वास रूप है । उनमे (प्राणो मे) जिन प्राणो मे चित्सामान्यरूप अन्वय होता है वे भावप्राण है अर्थात् जिन प्राणो मे चित्सामान्य, चित्सामान्य ऐसी एक रूपता—सदृशता होती है वे भावप्राण है । जिन प्राणो मे सदैव पुद्गल सामान्य पुद्गल, सामान्य ऐसी एक–रूपता-सदृशता होती है वे द्रव्यप्राण है । चित्सामान्य अन्वय वाले भावप्रण है और पुद्गल सामान्यरूप अन्वय वाले द्रव्यप्राण हैं । उक्त दोनो को त्रिकाल, अच्छिन्न सन्तानरूप से (अटूट धारा से) धारण करता है इसलिए ससारी को जीवत्व कहते है । मुक्त जीव को तो केवल भाव प्राणो का ही धारण होने से जीवत्व है ।[१३] यदि आयु नामक कर्मपुद्गल के सम्बन्ध से जीवत्व माना जाय तो उस कर्मपुद्गल का सम्बन्ध धर्म अधर्म आदि द्रव्यो से भी है अतः उनमे भी जीवत्व होना चाहिए और सिद्धो मे कर्मसम्बन्ध न होने से

करेगा। ऐसी स्थिति मे ससार मे अनेक प्रकार के प्राणी अनेक तरह के परिणामो को भोगते हैं तथा लोक मे विभिन्न प्राणियो के स्वभाव, कार्य आदि मे जो विभिन्नताये दिखाई पडती हैं, उनका कोई हेतु नही रह जाता है।

साख्यदर्शन के अनुसार पुरुप अमूर्त, चेतन, भोक्ता, नित्य, सर्वव्यापी, क्रियारहित, अकर्ता, निर्गुण और सूक्ष्म है। चैतन्य शक्ति से पदार्थों का ज्ञान नही होता। अचेतन बुद्धि से ही पदार्थ जाने जाते हैं। यह बुद्धि पुरुप का धर्म नही केवल प्रकृति का विकार है। इस अचेतन बुद्धि मे चेतन का प्रतिविम्ब पडने पर चित् शक्ति अपने आपको बुद्धि से अभिन्न समझती है। इसीलिए पुरुप मे मैं सुखी हूँ, मैं दुखी हूँ ऐसा ज्ञान होता है। चित्शक्ति के प्रतिविम्ब पडने से यह अचेतन बुद्धि चेतन की तरह प्रतिभासित होने लगती है। इस बुद्धि के प्रतिविम्ब का पुरुप मे झलकना ही पुरुप का भोग है। वास्तव मे वध और मोक्ष प्रकृति का ही होता है। पुरुप और प्रकृति का अभेद होने से पुरुष के ससार और मोक्ष का अभाव माना जाता है। वास्तव मे पुरुप निष्क्रिय और निर्लेप है।

जैनो के अनुसार चेतन शक्ति को ज्ञान से शून्य कहना परस्पर विरुद्ध है। यदि चेतन शक्ति स्व और पर का ज्ञान कराने मे असमर्थ है तो उसे चेतन शक्ति नही कह सकते तथा अमूर्त चेतन शक्ति का बुद्धि मे प्रतिविम्ब नही पड सकता क्यो कि मूर्त पदार्थो का ही प्रतिविम्ब पडता है। चेतनशक्ति को परिणमनशील और कर्ता माने विना चेतनशक्ति बुद्धि मे परिवर्तित नही हो सकती है। पूर्वरूप त्याग और उत्तर रूप के ग्रहण विना पुरुप चेतन नहीं कहला सकता। इस प्रकार पूर्वाकार के त्याग और उत्तराकार के ग्रहण मानने से पुरुप को निष्क्रिय नही कह सकते। यह पुरुप अनादिकाल से अविवेक के कारण प्रकृति से वध रहा है। परन्तु प्रकृति अचेतन है इसलिए वध पुरुप के ही मानना चाहिए।

अन्यथा प्रकृति का स्वभाव सदा प्रवृत्ति करना है अतएव प्रकृति अपने स्वभाव से कभी निवृत्त नही हो सकती, इसलिए पुरुष को कभी मोक्ष नही हो सकता। बुद्धि को जड मानने से उससे पदार्थो का ज्ञान नही हो सकता, जिस प्रकार दर्पण चेतन नही हो सकता।

उपर्युक्त कारणो से जैनधर्म मे माना गया है कि आत्मा व्यवहारनय से पुद्गल कर्म आदि का कर्ता है, निश्चय से चेतन कर्म का कर्ता है और शुद्धनय की अपेक्षा शुद्ध भावो का कर्ता है। व्यवहार नय से आत्मा सुख दु ख रूप पुद्गल कर्मो के फल को भोगता है और निश्चयनय से अपने चेतन भाव को भोगता है।[२१] इस प्रकार वह एक दृष्टि से कर्ता और दूसरी दृष्टि से अकर्ता है। यदि आत्मा को कर्ता न माना जाय तो उसे भोक्ता भी कैसे माना जा सकता है। वास्तव मे कर्तृत्व और भोक्तृत्व का कोई विरोध नही है। यदि इन दोनो मे विरोध माना जाय तो आत्मा को भुजि क्रिया का कर्ता कैसे माना जा सकता है, क्यो कि भोगने क्रिया के कर्ता को ही तो भोक्ता कहते है। इस प्रकार आत्मा के कर्तृत्व को न स्वीकार करने का मतलब है उसका भोक्तृत्व भी न मानना। इसलिए उसे भोक्ता मानना है तो कर्ता मानना आवश्यक है।[२२]

आत्मा को भोक्ता विशेषण बोद्धदर्शन को लक्ष्य करके कहा गया है। यह दर्शन क्षणिक वादी होने के कारण कर्ता और भोक्ता का ऐक्य मानने की स्थिति मे नही है, किन्तु यदि आत्मा को कर्मफल का भोक्ता न माना जाय तो कृतप्रणाश और अकृत अभ्यागम का प्रसग आवेगा अर्थात् जो कर्म करेगा उसे उसका फल प्राप्त नही होगा बल्कि फल उसे प्राप्त होगा जिसने कर्म नही किया। इसलिए बहुत बडी अव्यवस्था हो जायगी। इसलिए आत्मा को अपने कर्मो के फल का भोक्ता अवश्य मानना चाहिए। यह बात अवश्य है कि आत्मा सुख दु ख रूप कर्मफलो का भोक्ता व्यवहारदृष्टि से है, निश्चय दृष्टि से तो वह अपने चेतन भावो का ही भोक्ता है, कर्मफल का भोक्ता नही, इसलिए वह कथचित् भोक्ता है, कथचित नही है।[२३]

---

१ 'चेतना लक्षणो जीव' आदिपुराण २४/९२
२ तत्त्वार्थसूत्र पृ० ८५ विवेचनकर्त्ता प फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री
३ आदिपुराण २४/१०१–१०२
४ ब्र हरिलाल जैन : आत्मप्रसिद्धि पृ २,३,४
५ वही पृ० ३४८
६. जीवो परिणमदि जदा सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो।
सुद्धेण तदा सुद्धो हवदि हि परिणामसब्भावो ॥
प्रवचनसार गाथा ९
७ वही अमृतचन्द्राचार्य कृत व्याख्या
८ णाणप्पमाणमादा णहवदि जस्सेह तस्स सो आदा हीणोवा अहिओ वा णाणादो हवदि धुवमेव ॥
हीणो जदि सो आदा तण्णाणमचेदण ण जाणादि।
अहिओ वा णाणादो णाणेण विणा कहणादि ॥
प्रवचनसार गाथा २४–२५
९ जीवोत्ति हवदि चेदा उवओगविसेसिदो पहू कत्ता
भोत्ता य देहमत्तो ण हि मुत्तो कम्मसजुत्तो
कम्ममलविप्पमुक्को उड्ढ लोगस्स अन्तमधिगता
सो सव्वणाणदरिसी लहदि सुहमणिंदियमणत
कुन्दकुन्द : पचास्तिकाय गाथा २७–२८
१० जीव प्राणी च जन्तुश्च क्षेत्रज्ञ. पुरुषस्तथा।
पुमानात्मान्तरात्मा च ज्ञो ज्ञानीत्यस्य पर्यया. ॥
जिनसेन : आदि पुराण २४/१०३
११ वही २४/१०४–१०५
पाणेहि चदुहि जीवदि जीविस्सदि जोहु जीविदो पुव्व।

सो जीवो पाणा पुण बलमिंदियमउ उस्सासा ।।
कुन्दकुन्द पचास्तिकाय गाथा ३०

१२ पचास्तिकाय सग्रह पृ. ६४ (सोनगढ प्रकाशन)

१३ वही गाथा ३० की अमृतचन्द्र ाचार्यकृत व्याख्या

१४ तत्त्वार्थवार्तिक अध्याय २ सूत्र ७ की व्याख्या

१५ आदिपुराण २४/१०५

१६ गीता अध्याय १३/१

१७ आदिपुराण २४/१०६

१८ पुरुगुण भोगे सेदे करेदि लोयम्मि पुरुगुण कम्म ।
पुरु उत्तमो य जम्हा तम्हा सो वण्णिओ पुरिसो ।।
नेमिचन्द्राचार्य गोमट्टसार जीवकाड गाथा २७२

१९ जिनसेनः आदिपुराण २४।१०७

२० वही २४।१०८

२१ द्रव्यसग्रह गाथा ८, ९

२२ महावीर जयन्ती स्मारिका (जयपुर) प. १२३, १२४ वर्ष १९६४

२३ वही पृ. १२४

जिनके वचनो मे 'सत्य' बसा
भावो मे 'शिव' तन मे 'सुन्दर' ।
जिनकी सेवा मे शान्ति स्वय,
तल्लीन रही नित जीवन भर ।।
— स्व० सुधेश
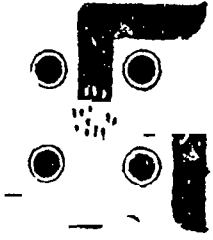
भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव पर हमारा कर्तव्य

पुरोहित स्वरूपनारायण

भारतवासी जन मन पर भगवान महावीर की अहिंसा मूलक साधना का प्रभाव बडा ही गहन एव लाभकारी सिद्ध हुआ है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तो राष्ट्रपिता द्वारा जिस प्रकार अहिंसात्मक सग्राम मे विजय हुई उसका परिणाम तो स्पष्ट है ही। अब रजत जयति के पश्चात् हमे हमारी आत्मा को अहिंसात्मक बनाने का प्रयत्न आवश्यक है।

हम स्वतन्त्र हुए किन्तु आर्थिक एव सामाजिक बेडिया हमे कु ठित कर रही है। हमे पद-पद पर परमुखापेक्षी होना पड रहा है। हमारा राष्ट्र अपने पैर पर खडा नही हो सका है।

मेरे नम्र विचार मे हममे राष्ट्रीय भावना के साथ २ नैतिकता एव सदाचरण की दीक्षा अत्यावश्यक है। जब तक हम हमारे नित्य नैमित्तिक कर्म इस प्रकार की भावना से शुद्ध नही करेंगे, हमारी प्रगति धीमी और मद्धी मेद्धी रहेगी।

देश की भावी उन्नति देशवासियो के चरित्र, निष्ठा एव कठिन परिश्रम पर निर्भर है। इसके लिए हमे हमारे सामाजिक ढाँचे को सुदृढ एव सुसगठित बनाना है और उसके लिए व्यक्तिगत चारित्रिक गठन और अकुशयुक्त जीवनचर्या अपनानी होगी। जब तक हम अपने आपको अनुशासन युक्त नागरिक नही बना सकेंगे, हमारी समुचित उन्नति होना दुष्कर है।

हमारे पूर्वजो ने जो धर्मरूपी अकुश को हमारे जीवन मे आवश्यक माना था उसका कारण यही है कि जब तक हम वस्तुत "मानव" न बने हमे अन्य प्राणियो से उच्च उठने की आकाक्षा नही करनी चाहिए। इसीलिए तो यह उक्ति है कि 'आहार निद्रा मन मैथुन च सामात्यमेनत् पशुभिर्नराणा। धर्मो-हि तेषामपिक विशेषो धर्मेण हीना पशुभि समाना ॥

अस्तु हमे अन्य योनियो से ऊपर उठना है और उसी के लिए हमे नियत्रित होना है। यही हमारा सामाजिक बधन ह और इसे ही राजनीति द्वारा भी

परिलक्षित करके हमे सुराष्ट्रिय होने की प्रेरणा दी जाती है।

आज हम राजनैतिक एव सामाजिक दृष्टि से उच्छृङ्खल होते प्रतीत हो रहे है और हमारे जन-जीवन मे व्याप्त दूषित प्रवृत्तिया बढती ही जा रही है। यह भावी प्रगति के लिए शुभ लक्षण नही है। हमे सुशासित एव अनुशासित होने के लिए अपने आपको अनेक बधनो से बाँधना आवश्यक है। इसे ही हमारे ऋषियो ने धर्म की सज्ञा दी और उससे नियत्रित होने की प्रेरणा दी।

यदि हम इसी नियत्रण को आडबर या पाखड की सज्ञा देकर उससे मुक्ति पाने की चेष्टा करते है तो सहज ही हम गलत मार्ग मे प्रविष्ट होते जायेगे और अपना ही नाश करेंगे।

इसलिए हमे हमारे अवतारो, ऋषिमहर्षियो एव सिद्ध पुरुषो के द्वारा निहित मार्ग का ही अनुसरण करना चाहिए तभी हम उन्नति पथ की ओर अग्रसर हो सकेगे। "महाजनो येन मत स पथा"।

दैनिक जीवन मे यदि हम अहिंसा सत्य ब्रह्मचर्य अपरिग्रह आदि सद्गुणो का पालन करेंगे तो हम देश व समाज के सच्चे सेवक हो सकेंगे। इस प्रकार की भावना रखने से ही हम देश मे फैले हुए भ्रष्टाचार को रोक सकेगे और सामाजिक कुरीतियो को भी मिटा सकने की क्षमता उत्पन्न कर सकेगे।

हमारे ही भाई क्षुद्र स्वार्थ के वशीभूत होकर यदि जनविरोधी प्रवृत्तियो मे लीन होते है तो उनको रोकथाम करना हमारा धर्म है और उसके लिए हमे स्वेच्छा से कटिबद्ध होना चाहिए।

महावीर प्रभु के निर्वाणोत्सव पर हमे यह दृढ प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि अहितकर राष्ट्रविरोधी एव असामाजिक प्रवृत्तियो से हम दूर ही नही रहेगे बल्कि ऐसी प्रवृत्तियो को फैलने से रोकेंगे और उसके विरुद्ध गतिविधियो का डटकर मुकाबला करेंगे और इसी निमित्त सामाजिक सगठनो द्वारा सतत् इस ओर प्रयत्नशील रहेगे।
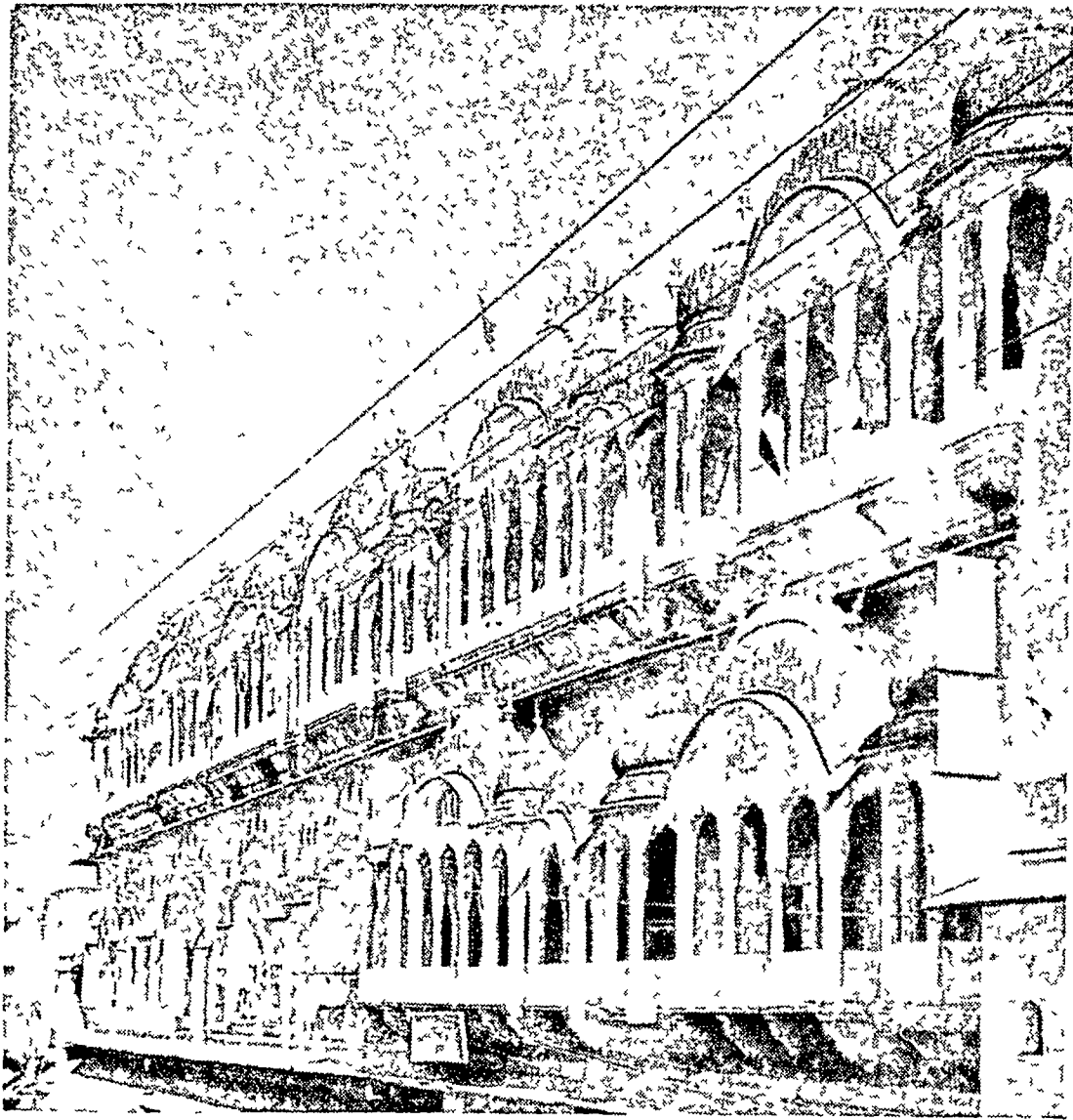
सीकर स्थित श्री दि०जैन बड़ा मन्दिर का बाहरी दृष्य

दीवान जी की नशियाँ की मुख्य चँवरी, सीकर

आज की एक ज्वलन्त समस्या समाधान महावीर वाणी में
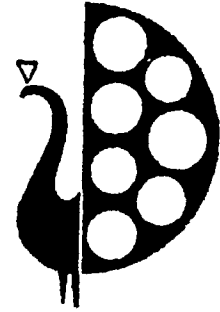
○ श्री प्रतापचन्द जैन, आगरा

यदि जीवन मे समस्याये न आये तो मानव निकम्मा बन जाय। समस्याये हमे प्रमाद छोड उठने को प्रेरित करती है, सदा से करती रही है। वे हमारे सोये पुरुषार्थ को जागृत करती है। आज फिर वही स्थिति हमारे सामने है। आबादी बढ रही है और आवश्यकताए भी बढ रही है। उत्पादन उस अनुपात मे बढ नही रहा। महगाई आसमान को छ रही है।

अकाल, सूखा और बाढ देश मे कोई नई चीज नही है। ऐसी स्थिति सदियो पहले से बराबर आती रही है। धरसेनाचार्य के समय मे उत्तर भारत मे बारह साल का अकाल पडा था परन्तु इतनी महगाई तब भी नही आई थी।

जनसख्या मे वृद्धि परन्तु उसके अनुपात मे उत्पादन का न बढना तो एक कारण है ही, इसके अतिरिक्त भौतिकी विकास और विज्ञान के बढते चरणो के कारण मनुष्य की आवश्यकताए भी बढी हैं। उन आवश्यकताओ और महत्वाकाक्षाओ को पूरा करने के लिए उसमे स्वार्थ की भावना भी तेजी से उपजने और पनपने लगी है। जिसको जब भी और जहा भी मौका मिलता है अनावश्यक सामग्री और सम्पदा बटोरने लगता है। फलतः अभाव की

भोजन जीवन के लिए उतना ही आवश्यक है जितनी कि हवा। बडे से बडा साधक भी इसके बगैर नही रह सकता। जब खाद्य पदार्थ की कमी होने लगती है तब इसकी समस्या भयङ्कर हो जाती है। देश इस समस्या से आज बुरी तरह पीडित है, ग्रसित है।

कल्पतरुओ के क्षीण होने पर आदि तीर्थङ्कर भगवान ऋषभदेव के समय मे भी भोजन की समस्या आई थी। तब उन्होने मानव को पुरुषार्थ का महामन्त्र दिया था। उन्होने कहा था "हाथो का उपयोग केवल खाने के लिए ही नही, उत्पादन और उपार्जन के लिए भी करो।" मानव को उन्होंने खेती और शिल्प की कला सिखाई।

स्थिति पैदा हो जाती है और होने लगती है मूल्य वृद्धि ।

श्रम का मूल्य बढने से भी महगाई बढी है । जब अन्य आवश्यक वस्तुओ जैसे कपडा, लोहा, दवा, विजली, तेल, सीमेट, खाद और पानी के भाव बढी मजदूरी के कारण बढेंगे तो उनका प्रभाव खाद्य पदार्थो पर पडना भी अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त दो बार रुपए का अवमूल्यन हो चुका है तब से रुपया और भी सिकुड गया है। धडाधड़ नोटो की छपाई ने उसकी सामर्थ्य और कम कर दी है । इतना ही नही, सेर से बढकर किलो आया और गज से बडा मीटर। उधर नये सिक्के के चलन से जो चीज दस पैसे मे आती थी वह पन्द्रह मे आने लगी । महगाई इन बातो से भी बढी हैं ।

महगाई हमारे देश मे ही बढी है सो बात नही यह विश्वव्यापी है । आवाज की गति से चलने वाले हवाई जहाजो ने सुदूर देशो को निकट ला दिया है क्योकि महीनो का रास्ता अब घटो मे ही पूरा हो जाता है । अतएव अन्य देशो का प्रभाव यहा भी पडता है ।

अनैतिक कमाई का दो नम्बर का पैसा भी इस महगाई का बहुत बडा कारण है । यही वह पैसा है जो काले बाजार और जखीरेबाजी को जन्म देता है । किसी भी वस्तु का अभाव अथवा महगा कर देना ऐसे लोगो के बाये हाथ का खेल है । यह पैसा नौकरशाही को भी भ्रष्ट बनाकर उस गन्दे खेल मे शरीक कर लेता है ।

मनुष्य दुरुपयोग द्वारा भी प्रभाव पैदा कर रहा है । मैंने देखा है दावतो मे पत्तलो पर से अनाप शनाप झूटन का फेका जाना । होगा भी और क्या जबकि दो साल के वालक को भी हम अलग पत्तल पर बैठाते है और उसे भी उतना ही परोसते है जितना कि एक युवक को । सस्ता खरीद कर हजारो लाखो मन खरीद कर भर लेते है । फिर अभाव का लाभ उठा कर उसे महगा वेचते है । हाल के छापो से यह बात स्पष्ट हो गई है जोधपुर मे एक ही जखीरेबाज के यहा कई गोदामो मे हजारो मन खाद्य सामान मिला था ।

तो यह मुसीवत कुछ तो दैवी है और कुछ मनुष्य ने खुद खडी की है अपने स्वार्थवश उधर राजनैतिक नेताओ ने भी पलीता लगा रक्खा है । स्थिति को मिल बैठकर सम्हालने और सुलझाने के बजाय उसे वे और भी विषम बना रहे है और देश की जनता मे घबराहट पैदा कर उससे खिलवाड कर रहे है । किसानो को भडका रहे है ।

मनुष्य आज स्वार्थ मे अन्धा हो गया है। उसकी नीयत खराब है । उसकी शिक्षा दूषित है । वह केवल अपनी सोचता है, न पडौसी की, न समाज की और न देश की । पैसे और सत्ता ने उसका दिमाग और भी बिगाड दिया है । जब एक आदमी सम्पदा का ढेर लगा लेगा तो दूसरी और गड्डा (कमी) होगा ही । तो इस महगाई और अभाव के बहुत से कारणो मे से कुछ ये भी हैं ।

इसका समाधान केवल सरकार के पास नही है और न वह अकेली कर ही सकती है । उसकी मशीनरी भ्रष्ट है जो खुद खाने लगती है । इस समस्या का समाधान आम जनता के पास है । जैन समाज इस कार्य मे बहुत बडी भूमिका निभा सकता है और उसे निभाना चाहिये । वे उस वीर के अनुयाई है, जिसने आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व प्राणिमात्र के कल्याण के लिए भरी जवानी मे अटूट सम्पदा और वैभव को लात मार कर प्रखण्ड साधना की थी, घोर तप किया था जिसने प्रेम की वह सरिता बहाई थी कि शेर और गाय एक साथ बैठते थे ।

भगवान का उपदेश है कि–

'दीन दुखी जीवो पर मेरे उर से करुणा श्रोत बहे ।'

हम रोज भावना भाते है कि "सुखी रहे सब जीव जगत के ।" इन उपदेशो और भावनाओ को

मूर्त रूप देकर हम वर्तमान सकट को दूर करने मे अपना योगदान दे सकते है।

(१) पुरुषार्थ द्वारा उपार्जन और उत्पादन पर कोई रोक नही है। सीमा बाधनी चाहिये हमे अपने उपभोग की। अपनी उस सीमित आवश्यकता से जो भी बचे उसे हम औरो को दान करदे या सस्ता बेच दे।

(२) जहा भी और जिस स्थिति मे भी हम काम करते हो सचाई और ईमानदारी का व्यवहार करे। अपने व्यवसाय और व्यापार मे अनैतिकता को न आने दे। बात के धनी बने।

भगवान महावीर के ढाई हजारवें निर्वाण महोत्सव की पावन वेला मे हम एक ऐसी समाज बने और ऐसी समाज की रचना करे जो अपने सद्कार्यो और अच्छे आचरण के लिए हजारो मे भी जानी पहचानी जा सके। तभी हम सही मायनो मे उस समारोह को मना सकेंगे और वह मनाना सार्थक होगा तभी हमारी सस्कृति की रक्षा हो पायगी विश्व धर्म का कोरा नारा लगाने से कुछ न होगा।
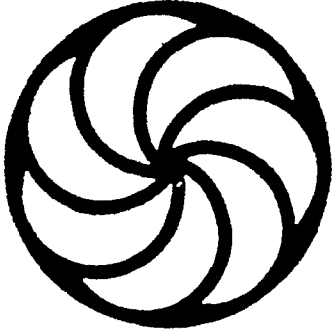
भगवान महावीर युगीन राजतंत्र और शासन

○ डॉ० पवन कुमार जैन, हिन्दी विभाग
श्री के० के० जैन कॉलेज, खतौली (मु० नगर)

मतदान केन्द्रो को वम से उडाने का नकसली पडयन्त्र, चुनाव दगो मे ३ मरे ५० घायल, चुनाव अधिकारी को कमरे मे वन्द कर दिया, दिलीप-कुमार की कार पर पथराव, प० वगाल के दो उम्मीदवारो की हत्या का विफल प्रयास। आज का समाचार-पत्र इस प्रकार के समाचारो से भरा था। जैसे-जैसे चुनाव का समय निकट आता जा रहा था, इस प्रकार के शीर्षको की सख्या वढती ही जा रही थी। मन उद्दीप्त हो उठा। समाचार-पत्र उठा कर एक ओर रख दिया। सिर कुर्सी के सहारे टिका कर, मैं आखें वन्द कर सोचने लगा हमारे देश की राजनीति मे यह कैसा विष भरता जा रहा है? यह राजनीति के मखमली आवरण मे लिपटी गुण्डागर्दी नही है, तो क्या है? प्रश्न चिह्नो से मस्तिष्क भरता जा रहा था। मैं स्वय से प्रश्न करता और स्वय ही उत्तर देता। किन्तु एक का भी ठीक उत्तर नही दे पा रहा था। कवि दिनकर की यह पक्तिया स्मृति पट पर उभरने लगी —

> "देवी! दुखद है वर्तमान की
> यह असीम पीडा सहना,
> कही सुखद इससे सस्मृति मे
> है अतीत मे रत रहना।"

इन पक्तियो ने मुझे पलायनवादी बना दिया और मेरा अनजाना मन स्मृति पखो पर चढ भारत के अतीत रग भूमि मे उड चला।

वियोगी हरि ने भगवान महावीर को उपनिषद काल का माना है। प्रभुदयाल मित्तल के अनुसार वैदिक साहित्य मे यज्ञो के लिये 'व्रह्म' शब्द का प्रयोग मिलता है। परवर्ती साहित्य मे उन्हे वीर कहा गया है। दीपावली का पूजन मूलतः यज्ञो की जन्म रात्री के उत्सव के रूप मे आरम्भ हुआ था, किन्तु कालान्तर मे उसके साथ और भी कई परम्पराए तथा मान्यताए जुडती गई हैं।[1] मित्तल जी ने इसी स्थान पर लिखा

है—"जैन धर्म के अन्तिम तीर्थकर भगवान महावीर के सम्बन्ध मे डा० वासुदेव शरण जी का मत है वे भी मूल रूप मे यक्ष ही थे। 'वीर' के रूप मे उनकी पिंडी का पूजन पूर्वी जिलो मे अभी तक होता आया है। दीपावली ही महावीर का जन्म है। [२] किन्तु एक अन्य विद्वान का मत है कि जैन धर्मावलबियो मे प्राचीन काल से ही दीपावली का उत्सव मनाया जाता रहा है। इसी धर्म के प्रतिष्ठापक महावीर स्वामी का निर्वाण कार्तिकी अमावस को हुआ था। कल्प सूत्र मे लिखा है, महावीर का महाप्रयाण होने पर जब लिच्छवि, मल्ल आदि १८ राज प्रमुख उनके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करने को एकत्र हुये, तब उन्होने अनुभव किया कि ज्ञान का प्रकाश तो गया अत दीपको के भौतिक प्रकाश से ही भविष्य मे इस दिन की स्मृति को कायम रखा जाये। तभी से कार्तिकी अमावस को दीपावली के रूप मे मनाया जाने लगा। [3] इस सम्बन्ध मे मजूमदार का मत है :—

'The event is said to have happened 215 years before the Mauryas and 470 years before Vikrama This is usually taken to refer to 528 B. C. But 648 B C. is prefered by some modern scholars who rely on a tradition recorded by the Jaina monk Hemachandra the intervel between Mahavir's death and the accession of Chandra Gupta Maurya was 155, and not 215 years [4]

भगवान महावीर और उनके समकालीन महापुरुषो से सम्बन्धित साहित्य पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि इस युग का राजतन्त्र एव शासन बड़ा सुदृढ तथा वैज्ञानिक था।

एक राज प्रणाली :—भोज्य ब्राह्मण की एक शासन पद्धति थी। जिसमे गणराज्य की स्थापना मान्य थी। और वैदिक युग मे गणतन्त्र तथा राज्य तन्त्र दोनो प्रकार के शासन विधान के दृष्टान्त मिलते है। [५]

पाणिनि के अनुसार इस युग मे भी दो प्रकार के शासन तन्त्र प्रचलित थे राज्य तन्त्र और सङ्घ तन्त्र। राजा जिस तन्त्र मे अधिपति होता था उसे राज्य तन्त्र तथा दूसरे को सघ तन्त्र कहा जाता था। तीन प्रकार की परिषद होती थी। सामाजिक परिषद् चरणो के अन्तर्गत विद्या सम्बन्धी परिषद् तथा राजनैतिक मन्त्री परिषद्। परिषद् का सदस्य परिषद या परिषध कहलाता था। राजनीति से सम्बन्धित परिषद् मन्त्री परिषद् होती थी। जो राजा इसके साथ मिलकर शासन चलाता था उसे परिषदद्वल राजा जैसे सम्मानित शब्दो से पुकारा जाता था। महावीर कालीन जैन साहित्य मे इस प्रकार की परिषद् का उल्लेख प्राप्त होता है।

कोई भी राजा परिषद्वल कहलाने का अधिकारी तभी तक होता था जब तक वह परिषद के मुख्य मन्त्री के साथ अपनी सधि का पालन करता था। पालन करने पर परिषद् उसे पदच्युत कर सकती थी। इससे स्पष्ट है कि मन्त्री परिषद् राजा की निरकुश इच्छा का खिलवाड नही थी। राजा शपथ ग्रहण करता था—"जिस रात्री को मेरा जन्म हुआ है, और जिस रात्री को मेरी मृत्यु होगी, उन दोनो के बीच मे मेरी सतति, धन, आयुष्य और यश है वह सब नष्ट हो जाये यदि मैं प्रजाओ से विद्रोह करू।" वास्तव मे यह शपथ ही इस युग मे सविधान की कुजी थी। इस युग मे कही-कही मुख्य मन्त्री के लिये ब्राह्मण शब्द का भी प्रयोग हुआ है क्योकि इस युग मे परम्परा थी कि त्यागी विद्वान तथा राजाशास्त्रवेत्ता ही मुख्य मन्त्री होता था। तथा उसकी पदवी ब्राह्मण होती थी। महावीर युग मे राजा के नाम के साथ उसके महामन्त्री के नाम का उल्लेख होता था। यह उस युग की विशिष्ट प्रथा थी।

मन्त्रणा आरम्भ करने के लिये सदस्यो की एक निश्चित सख्या आवश्यक थी। परन्तु इस कोरम मे विजयधर (प्रधान) की ठागणना नही होती थी। ज्ञाक्ति की स्थापना के साथ सभा प्रारम्भ होती थी। ज्ञाक्ति (प्रस्ताव) सम्बन्धी वार्ता ही वहा हो सकती थी। प्रस्ताव के एक पाठ और कभी-२ तीन पाठ होते थे। प्रस्ताव पर सदस्यो की मौन स्वीकृति समझी जाती थी। विरोध होने पर शलाकाओ (ये लकडी की बनी होती थी) द्वारा वोटिंग होता था।

सभ्य, पुरोहित, महर्षि, युवराज, राजकुमार, राजकुल के प्रतिहारी तथा परिचारक, अगरक्षक, दोवारिक, स्वागतिक अधिकारी, सौरवशच्चिक तथा राजा पुड्वा आदि राजतन्त्र के अन्य महत्वपूर्ण कलपुर्जे थे। पाणिनी के अनुसार उस युग मे अ गरक्षक का दायित्व तथा सम्मानित पद राज-कुमारो को सौपा जाता था। सौरवशच्चिक का कार्य राजा के लिये सुखशय्या बनाना था। बौद्ध साहित्य मे चार प्रकार की शय्याओ का उल्लेख मिलता है। बुद्ध ने चौथी शय्या तथागत को रागा-द्वेष रहित होने के कारण सच्ची सुखशय्या माना था। यही स्थिति जैन साहित्य मे है।

आलोच्य काल मे राजाओ का पारस्परिक सघर्ष उतना ही तीव्र था जितना कि राजाधीन और गणाधीन जनपदो का। जहाँ उपनिषदो मे और जातको मे काशी एक बलवान स्वतन्त्र राज्य के रूप मे हमारे सामने आती है महावीर के समय मे वह कौशल के साम्राज्य का एक अ ग बन चुकी थी। ऐसे ही बिम्बिसार के समय मे मगध ने अ ग जनपद को बलपूर्वक आत्मसात् कर दिया। शाक्य-गण कौशल की अधीनता स्वीकार करता था। तब ली विदूडभ ने उस पर माघातिक आक्रमण किया और अजातशत्रु ने लिच्छवियो से सग्राम ठाना।[६]

शासन —शासन का सबसे महत्वपूर्ण अधि-कारी अध्यक्ष होता था। खेत रखक का कार्य जो और धान के खेतो की रक्षा करना था। खेतो की नाप-जोख करने वाले अधिकारी क्षेत्रकर कहलाते थे। मापने की रस्सी मे दो खू टियाँ होती थी। रज्जुग्राहक अपने सिरे की खू टी गाड देता था तथा दूसरा सिरा खेत का स्वामी पकड कर यथा स्थान गाडता था। इस प्रकार नाप होती थी।

लोक मे जो बहुत तरह के लामभाग थे, उनका समर्थन किसी राजा से नही बल्कि रिवाज के कारण होता था। किसी माल पर कितनी चु गी लेगे। यह भी पुराने बधेज की बात थी। हाट बाजार लगाने के लिए दुकानो पर कितनो वसूली की जाये इत्यादि शौल्कशालिक और आपणिक के रूप मे उगाही की जाती थी। उन सबके मूल मे आचार या रिवाज को ही प्रधानता दी जाती थी। इसी प्रकार समाज मे भिन्न-भिन्न स्तरो पर कार्य करने वाले लोगो को कितना पारिश्रमिक दिया जाय, अथवा महर्षि प्रजावती पुरोहित आदि राज्य के विशिष्ट अधिकारी या सम्मानित व्यक्तियो को कितना पूजा वेतन दिया जाये अथवा प्रलेपिका, विलोपिका, अनुलेपिका मणिपाली आदि परिचारि-काओ को उनकी सेवा के बदले मे कितना नेग दिया जाये इन सबका निर्णय लोकाचार या समयाचार या रिवाज के अनुसार होता था।

पाणिनि ने कुछ विशेष करो का भी उल्लेख किया है। ये कर भारत के पूर्वी भाग मे लगाये जाते थे। इन्हे कर के स्थान पर कार और इन्हे वसूल करने वालो को कारकर कहा जाता था।

जैन धर्म के साधुओ के आचार नियमो को सामाचारिक कहा जाता था। डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का अनुमान है कि यह शब्द सम्भवत राजसभा उत्सव आदि के कार्यों के सम्पादन की उचित विधि के लिए प्रयुक्त होता था।

न्याय व्यवस्था —इस युग मे परम्परा प्राप्त आचार या विधि का अस्खलन या अनिकाराकरण

न्याय था। न्याय के अनुकूल कर्म न्याय कहलाता था वादी अथवा अभियोक्ता के लिए परिवादी या परिवादक कह कर पुकारा जाता था। गवाह साक्षी कहलाते थे। उनके प्रमाण्य का आधार घटना का साक्षात् दर्शन था। जो मनुष्य जिस घटना का साक्ष्य ज्ञान रखता था, वह उसी नाम से अभिहित होता था। साक्षी को नियमानुसार शपथ दिलाने की प्रथा भी थी। इस युग मे दो प्रकार के सवित् थे। समूह कृत और राज कृत वर्तमान न्यायालयो का आधार भी ऐसा ही है।

सेना —इस युग मे जो सैनिक जिस हथियार का प्रयोग करता था उसका नामकरण उसी के नाम पर होता था।

पाणिनि मे तालधनुष का उल्लेख किया है इसका एक सिरा पैर से साध कर तथा एक हाथ से धनुप की मूठ पकड कर दूसरे हाथ से बाण छोडा जाता था युद्धो का नामकरण दो प्रकार से होता था युद्ध मे भाग लेने वाले योद्धा के नाम पर तथा युद्ध प्रयोजन के आधार पर।

जनपद —पाणिनि ने अपने युग की तीन महती सस्थाओ की ओर विशेष ध्यान दिया था—शिक्षा के क्षेत्र मे चरण, सामाजिक क्षेत्र मे गोत्र और राजनैतिक क्षेत्र मे जनपद। सस्कृत, जैन तथा बौद्ध साहित्य इनसे सम्बन्धित सामग्री से भरे पडे है केवल भगवान महावीर युगीन जनपद का अध्ययन करने के लिए पृथक से शोध की आवश्यकता है।

महावीर युग मे जनपदो का ताँता सारे देश मे फैला हुआ था। ये राजनैतिक साँस्कृतिक और आर्थिक जीवन की इकाई बन गये थे। इस युग को महाजनपद युग कहा जा सकता है। पचाल इस युग का प्रसिद्ध जनपद था। यह क्षत्रियो का स्थान था। जनपद के दो प्रकारो का प्रचलन था। १-राज तथा २-गणाधीन। दोनो मे ही सभा तथा परिषद का स्थान महत्वपूर्ण था। इस युग मे सत्ता अधिकतर क्षत्रियो के हाथ मे थी। प्रत्येक जनपद की जनता अपनी-अपनी विधि से पूजा करती थी।

इस काल के जनपद परस्पर सघर्ष मे निरत थे और उनकी स्थिति परिवर्तनशील थी सूदूर उत्तर पश्चिम मे शाखा मनीषी साम्राज्य का प्रचार महत्वशाली घटना थी यद्यपि इस प्रसार को देश गत और काल गत के विषय मे अथवा उसके तत्कालीन ऐतिहासिक, सास्कृतिक प्रभाव के विषय मे निर्विवाद रूप से कुछ कहना कठिन है।[७] श्री गोविन्दचन्द्र पाडेय ने कौशल मगध आदि जनपदो की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है।—कौशल, मगध आदि जनपदो मे भी राजा और उनके रजातक्षत्रिय थे यद्यपि अजातशत्रु व विदूडम सरीखे नये राजाओ का बल उनके अमात्यो की कूट नीति, सेना की शक्ति तथा व्यक्तिगत न्योग्यता पर अधिक निर्भर था। उनकी मूर्धाभिषिकता पर कर्म, धर्म और अर्थ की विभिन्न दृष्टियो से राजकीय आदर्श दो रूपो मे प्रकट होता था। धर्म की दृष्टि राजा के कर्तव्यो पर जोर देती थी, अर्थ की दृष्टि राजा की शक्ति पर धर्म विषयक धारणा भी ब्राह्मणो की ओर थी, बौद्ध तथा जैनो की ओर।

संघ या गण .—इस युग मे सघ राज्यो का स्थान भी महत्वपूर्ण था। राजनीति के अतिरिक्त परिषद, गोत्र, जाति, पचायत आर्थिक सस्थाये तथा शिक्षा सस्थाये भी सघ के आदर्श से प्रभावित थी। आजकल के समान इस युग मे भी दल का नाम नेता के नाम पर पडता था। सघ सभा के अधिवेशन मे मतदान शलाका द्वारा होता था। सघ के निश्चय जो मतदान से लिए जाते थे। छन्दस्य कहलाते थे। सदस्यो का महत्व भी नेता से किसी प्रकार कम नही था। ध्वजा आदि के लिए प्रतीक जिह्न चुना जाता था।

भगवान महावीर युगीन राजतन्त्र और शासन

पर दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि इस युग मे राजतन्त्र और शासन वैधानिक रूप से सुदृढ था और आधुनिक युग के राजतन्त्र को आधारभूत सामग्री प्रदान करता है। जनपदो मे संघर्षपूर्ण स्थिति अवश्य थी किन्तु उनका रूप आज जैसा नही था।

---

(१) हमारी परम्परा-वियोगी हरि पृ० ५७८
(२) व्रज का सास्कृतिक इतिहास-प्रभुदयाल मित्तल पृ० ६२
(३) हिन्दी साहित्य का प्रथम खण्ड-भारतीय हिन्दी परिषद-डा० वासुदेव शरण—पृ० १६
(४) An Advanced History of India—by R. C. Majumdar P. 80
(५) पाणिनि कालीन भारतवर्ष—वासुदेव शरण अग्रवाल—पृ० ३६५
(६) वैदिक साहित्य और सस्कृति—डा० बालदेव उपाध्याय पृ० ४७२-७३
(७) बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास-गोविन्दचन्द्र पाँडेय पृ० १७

महावीर का आविर्भाव हुआ जिन्होने अपने आदर्श उपदेशो द्वारा अनात्मवाद का सबसे अधिक और पूर्णरूपेण खण्डन किया।

जर्मनी के विचारक हेरडर

वि० सं० १२१६ मे प्रतिष्ठित
भगवान चन्द्रप्रभु स्वामी की
प्राचीन मूर्ति डेह (नागौर)

६ वीं शताब्दी की काले
पाषाण की बाहुबलि स्वामी
की मूर्ति डेह (नागौर)

जीवो और जीने दो के प्रवर्तक प्रात: स्मरणीय भगवान

महावीर का २५००वा निर्वाण दिवस सफल हो

फोन : ५९

ज्ञानचन्द पवनकुमार जैन

क्रुडायल, डीजल, मोबील, अनाज,

गुड, शक्कर के विक्रेता

श्रीमाधोपुर

वर्द्धमान के २५००वें निर्वाणोत्सव के शुभावसर पर

हम आपका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं

रामप्रताप साँवरमल 'गोयल'

प्रभुदयाल नवरंगमल

होलसेल क्लोथ मर्चेन्ट

एण्ड

आकर्षक साड़ियों के विक्रेता

जगत हितकर भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव की

पावन वेला मे जीव मात्र के प्रति अनन्त शुभ कामनाएँ

बसन्तलाल कुन्दनलाल

कपड़े के थोक व्यापारी

श्रीमाधोपुर

हमारी सम्वन्धित फर्म :

सत्यनारायण कैलाशचन्द

रंगीन माल के थोक व्यापारी

व

बनियानों के थोक विक्रेता

श्रीमाधोपुर (राजस्थान)

श्री महावीर निर्वाणोत्सव के अवसर पर हम वीर प्रभु के चरणो मे नत मस्तक होते हुए सभी के प्रति हार्दिक शुभ कामनाएँ अर्पित करते है

कृषि उपज मंडी

श्रीमाधोपुर

अध्यक्ष

श्री हनुमानसिंह आर्य

सेक्रेट्री

श्री ताराचन्द बाकलीवाल

समस्याओं का हल भगवान महावीर की अहिंसा

० सत्यंधर कुमार सेठी, उज्जैन

आज से करीब २५७३ वर्ष पहले इस वसुधरा पर मगध देश के अतर्गत वैशाली के पास क्षत्रिय कुण्ड ग्राम मे राजा सिद्धार्थ और रानी त्रिशला के घर पर एक ऐसे महापुरुष का अवतरण हुआ जिसने मानवता के सरक्षण के लिए अपना समस्त जीवन अर्पित किया और विश्व को बतलाया कि यदि हमे शान्ति से जीना है तो हम अहिंसा के आधार से समता और सह-अस्तित्व का सदेश जीवन मे उतारें।

महावीर का मध्यकाल बडा विकट था समस्त देश और राष्ट्र दुखी थे। धर्म के नाम पर अनेक कुरूढियो का पोषण हो रहा था धर्म के टुकडे पथ भेदो मे हो रहे थे। विश्व कल्याण की भावनाये प्राय लुप्त थी। मानव ने दानवता का रूप ले लिया था मन्दिरो मे धर्म के नाम पर अबोध पशु और पक्षियो का हनन हो रहा था—अबलाओ और अत्यजो पर अत्याचार हो रहे थे देश मे सर्वत्र राक्षसी भावना पनप रही थी सर्वत्र ऐसे लोगो का बोलबाला था जिनके हृदय से मानवता लुढक गई थी। स्वार्थ का बोलबाला था। वर्ण भेद, जाति भेद और ऊचनीच की भावना ने उग्र रूप ले लिया था—वह समय आज से भी वीभत्स था। आज देश मे राजनैतिक समस्याओ को लेकर गहरा असतोष है और उस समय धर्म के नाम पर अन्ध विश्वासो के साथ होने वाले अत्याचारो से असतोष था।

ऐसे विकट समय मे महामानव भगवान महावीर का जन्म हुआ—महावीर प्रारम्भ से ही एक प्रतिभा सम्पन्न स्वयबुद्ध व्यक्ति थे। अत उनका जन्म एक युग पुरुष के रूप मे माना गया पौराणिक साहित्य मे तो यहा तक लिखा गया है कि इस युग पुरुष के जन्म पर भारत देश मे ही नही किन्तु जगत के कुछ अलौकिक क्षेत्रो मे भी महान् खुशिया मनाई गई और उन्होने पृथ्वी पर उतर करके राजा सिद्धार्थ के घर पर अमोलक रत्नो की वर्षा करके गरीबो की गरीबी दूर कर दी और महावीर को अलौकिक महापुरुष घोषित किया

और कहा कि यह बालक राष्ट्र का एक महान् पथ प्रदर्शक सत होगा—

महावीर का बाल्यकाल भी बडा रोचक रहा। बाल्य जीवन मे कई घटनाये घटित हुई जिनसे उनके समय-समय पर कई नाम घोषित किये गये इसलीए वीर, अति वीर सन्मति, वर्द्धमान आदि नामो से वे प्रसिद्ध हुए। महावीर प्रारम्भ से ही महान् चिंतक थे। बाल्य जीवन मे ऊपर उल्लिखित घटनाये उनके सामने आती और वे उन घटनाओ से व्यग्र होकर चिंतित हो उठते। कई बार वे एकान्त मे बैठ कर सोचते कि इन समस्याओ का हल क्या हो। महावीर के जीवन काल से यौवन अवस्था तक ये समस्याये और ज्यादा बढ गई। और वे जनता के व्याप्त असन्तोष को नही देख सके। महावीर एक राजघराने मे पैदा हुए थे, उनके पास अनत वैभव था, लेकिन वह वैभव महावीर को खीच न सका, महावीर के हृदय मे अपार करुणा का स्रोत था। उनमे आत्मीयता थी, उनके हृदय मे विशालता थी। वे चाहते थे कि विश्व के प्रत्येक प्राणी को स्वतत्र रूप से जीने का हक है, अन्याय और अत्याचार से मानवता जीवित नही रह सकती। अत महावीर तेरा काम है इन समस्याओ से ग्रस्त राष्ट्र को स्वतन्त्र करना। लेकिन वर्तमान जीवन से, वैभव सम्पत्तियो से या इन राज्य प्रासादो मे बैठकर सिर्फ विचार मात्र करने से इन समस्याओ का हल नही हो सकता। ये समस्याये सघर्ष, बलिदान और त्याग चाहती है। जिनके लिए दृढ सकल्प और दृढ साधना की आवश्यकता है। महावीर ने गहरे रूप से विचार किया और अत मे निर्णय लिया कि मुझे ऐसे निर्द्वन्द्व जीवन मे जाना है जहाँ एकाकी बैठकर विश्व कल्याण का मार्ग निकाल सकू।

महावीर के पहले भगवान पार्श्वनाथ नाम के एक ऐतिहासिक महापुरुष हो गये थे उन्होने भी राष्ट्र को मानवता का सन्देश देने के लिए और उसको जीवित रखने के लिए अथक प्रयास किया था लेकिन वह प्रयास स्थायित्व नही ले सका और उनके जीवन के २५० वर्ष बाद ही देश और राष्ट्रो मे अपना प्रचार और धर्म के नाम पर उच्छृ-खलताये जटिल रूप से इतनी बढ गई कि महावीर के उदय काल तक उन्होने विकट रूप धारण कर लिया।

महावीर ने इन समस्याओ को हल करने के लिए, राष्ट्र को त्राण देने के लिए, विश्व मे शान्ति कायम करने के मार्ग को हल करने के लिए अपने आप को माता-पिता, राज्य और वैभव से मुक्त किया। विवाह के प्रश्न को माता के बार-बार आग्रह करने पर भी ठुकराया और निश्चल ब्रह्मचर्य्य जैसे दुद्धर तप को अपना लक्ष्य बना कर जगल के एकात प्रदेश को अपना साथी बनाया और १२ वर्ष तक एकान्त मौन साधना मे इन समस्याओ को हल करने के लिए गहरा चिंतन किया, इन १२ वर्ष के साधन काल मे महावीर ने भूख, प्यास, शीत और उष्ण तक की बाधाओ को बाधा नही माना। उनका जीवन निर्विकल्प जीवन बन गया, और इस साधना काल मे महावीर ने गहरे चिंतन और अध्य-यन के बाद यही तय किया कि इन समस्त समस्याओ का हल अगर हो सकता है तो अहिंसा जैसे सार्व-भौमिक सिद्धान्त से ही हो सकता है—

अहिंसा ही एक ऐसा सिद्धान्त है जिससे मानवता की पुन प्रतिष्ठा हो सकती है, अहिंसा वात्सल्य प्रेम और आत्मीय भावनाओ की जननी है। अहिसा प्रति प्राणी मे आत्म दर्शन देखती है और वह चाहती है कि विश्व का प्रत्येक प्राणी स्वय भी जीवे और दूसरे को भी जीने दे। अहिंसा स्वय एक धर्म है। धर्म का सम्बन्ध जाति और वर्ण से नही। ऊँच और नीच से नही। पथ भेद की दिवालो से नही। मन्दिर और मस्जिद से नही। धम मानवता की एक अखण्ड ज्योति है जिसका उद्गम अहिंसा से है। अहिंसा सह-अस्तित्व और समता का आदर्श माग देती है। उसका हृदय

उदार है, वह महान् है। विश्व शान्ति का अमोघ मन्त्र है। और इस अहिसा का परिकर अपरिग्रह और अनेकान्त विचारधारा है। अतः प्रत्येक प्राणी मे सौहार्द और आत्मीय भावनाये अहिसा मे ही हो सकती है।

भगवान महावीर का यह अन्तिम निर्णय था। १२ वर्ष बाद उन्होने उस अहिंसा के सिद्धान्त को स्वय मे अनुप्राणित किया और विश्व को सदेश और त्राण देने का निर्णय लिया, यह निर्णय महान था, उनको विश्व को अवबोधित करना था, अतः उन्होने तय किया कि मगध देश के राजगृही नगरी के विशाल उतग गिरिराज के उन्नत मस्तक से यह निर्णय विश्व के सामने रखा जाय।

महावीर के दीक्षा काल के समय अन्य भी कई पुरुष उस क्षेत्र मे विचरण कर रहे थे, लेकिन वे दु खित जगत के प्राणी को सान्तवना नही दे सके। अतः उस वक्त सबका केन्द्र बिन्दु महावीर थे। बडे-बडे सम्राट और राजा भी यह चाहते थे कि महावीर अपनी दिव्य वाणी से त्रस्त प्राणियो को बचाने के लिए क्या मार्ग बतलाते है। महावीर ने अपने साधना के क्षेत्र से ज्यो ही राजगृही की तरफ कदम बढाया उनके पीछे अगणित प्राणियो ने अपनी कदमे बढाई और उस पवत के क्षेत्र ने एक विशाल सभा रूप ले लिया। उस सभा मे मानव ही नही पहुँचे लेकिन पशु पक्षियो ने भी अपनी उपस्थिति से उस क्षेत्र को घेर लिया, महावीर के चेहरे पर अपार शाति थी। अहिंसा का पूर्ण साम्राज्य था, वीतरागता की अपूर्व छटा थी। महावीर की अत-र्दृष्टि थी। सभा मे पूर्ण शान्ति का साम्राज्य था— महावीर ने अपने मौन को तोडते हुए समस्त प्राणियो को समझाते हुए लोक भाषा मे अपनी प्रथम देशना मे स्पष्ट रूप से घोषित किया कि जीवन को जीवित रखने के लिए मैं अहिंसा के सिद्धान्त को ही महत्व देता हूँ। और यही एक ऐसा सिद्धान्त है जिससे सतप्त और दु खित प्राणियो को त्राण मिल सकता है। अहिंसा प्राणी मात्र मे समता का व्यव-हार चाहती है, वह मानव को महत्व नही देती, मानवता को महत्व देती है, उसकी दृष्टि मे मनुष्य कीट और पतग एक है, वह सबमे आत्मदर्शन देखती है और कहती है सब मे प्राणो की प्रतिष्ठा है, अहिसा कहती है सबके प्राण समान है, इस वसु धरा पर सबको जीने का हक है। मानव का एकाधिपत्य नही जो किसी को मार सकती है और किसी को बचा सकती है। अहिंसा धर्म का रूप है। पथ, भेद दीवारे हैं। धर्म नही। महावीर ने अहिंसा को व्यावहारिक रुप देने के लिए उसके कई भेद और प्रभेद बतलाये और इसको मूर्त रूप देने के लिए अपना सशक्त कदम बढाया। महावीर की इस दिव्य देशना का सबने समादर किया और अगणित लोगो ने उनके चरणो मे लेटकर इस भगवती अहिंसा के सिद्धान्त को स्वीकार किया और कितने ही लोगो ने सकल्प किया इसके प्रचार का, महावीर ने मुख्य रुप से इस अहिसा के परिपालन के लिए दो मार्ग बतलाये। एक आशिक अहिंसक और एक पूर्ण अहिसक। इस अहिंसा का निनाद विश्व के कौने २ तक पहुँचा—कितने ही मठाधीशो ने प्रयास किया इसके विरोध का, लेकिन वे शक्ति मे खत्म हो गई, ढह गई और उनका अस्तित्व खत्म हो गया—और महावीर भगवान का मिशन सफल हुआ—इस अहिसा को जीवित रखने के लिए भगवान महावीर ने अपरिग्रह के सिद्धान्त पर और अनेकान्त विचार-धारा पर बहुत बडा बल दिया, वे समझते थे कि अहिंसा की हत्या शोषण और एकात विचारधारा से ही होती है। राष्ट्रो मे विवाद, अन्याय और अत्याचार सब शोषण का ही परिणाम है। अतः अहिंसा के साथ राष्ट्र और समाजो को जीवित रखने के लिए अपरिग्रह और अनेकात जैसे सिद्धान्तो का भी जीवन मे आना अति जरूरी है। इन सिद्धान्तो को जीवित रखने के लिए अगणित साहित्य का सर्जन किया गया और उसी का यह परिणाम है कि २५०० वर्ष

बाद भी इन सिद्धान्तो से राष्ट्र और समाजो को त्राण मिल रहा है।

महावीर के इन सिद्धान्तो की आज भी आवश्यकता है, इसके लिए सारा राष्ट्र उन लोगो की तरफ देख रहा है जिनके कधो पर इनके प्रचार और प्रसार की जिम्मेदारी है, आज देश मे सर्वत्र हाहाकार और चीत्कार है, सारे देश दुखी है—शांति का नाम नही है। चारो तरफ खुले रूप से अराजकता, अनुशासनहीनता बढती जा रही है, पारस्परिक प्रेम और सौहार्द का अभाव हो रहा है, भाईचारा और व्यवहार खत्म हो रहा है, आदमी अपने स्वार्थ वश खुखार हो रहा है, उसकी दृष्टि मे मानवता की कोई कीमत नही है। ऐसी स्थिति मे महावीर के ये तीन सिद्धान्त ही देश और राष्ट्र को त्राण दे सकते हैं। इसके लिए आज २५०० सौवाँ निर्वाण महोत्सव के समय हमे विचार करना है।
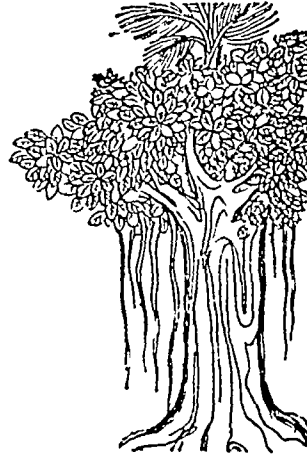
सिद्धत्थराय पियेकारिणीहि कु डले वीरो।
उत्तर फग्गुणि रिक्खे चित्तसिया तेरसीए उप्पण्णो ।।

भगवान महावीर कुण्डल नगर मे पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी (त्रिशला देवी) से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन उत्तरा-फाल्गुनी नक्षत्र मे उत्पन्न हुए।

—श्री यतिवृषभाचार्य कृत त्रिलोक प्रज्ञप्ति से।
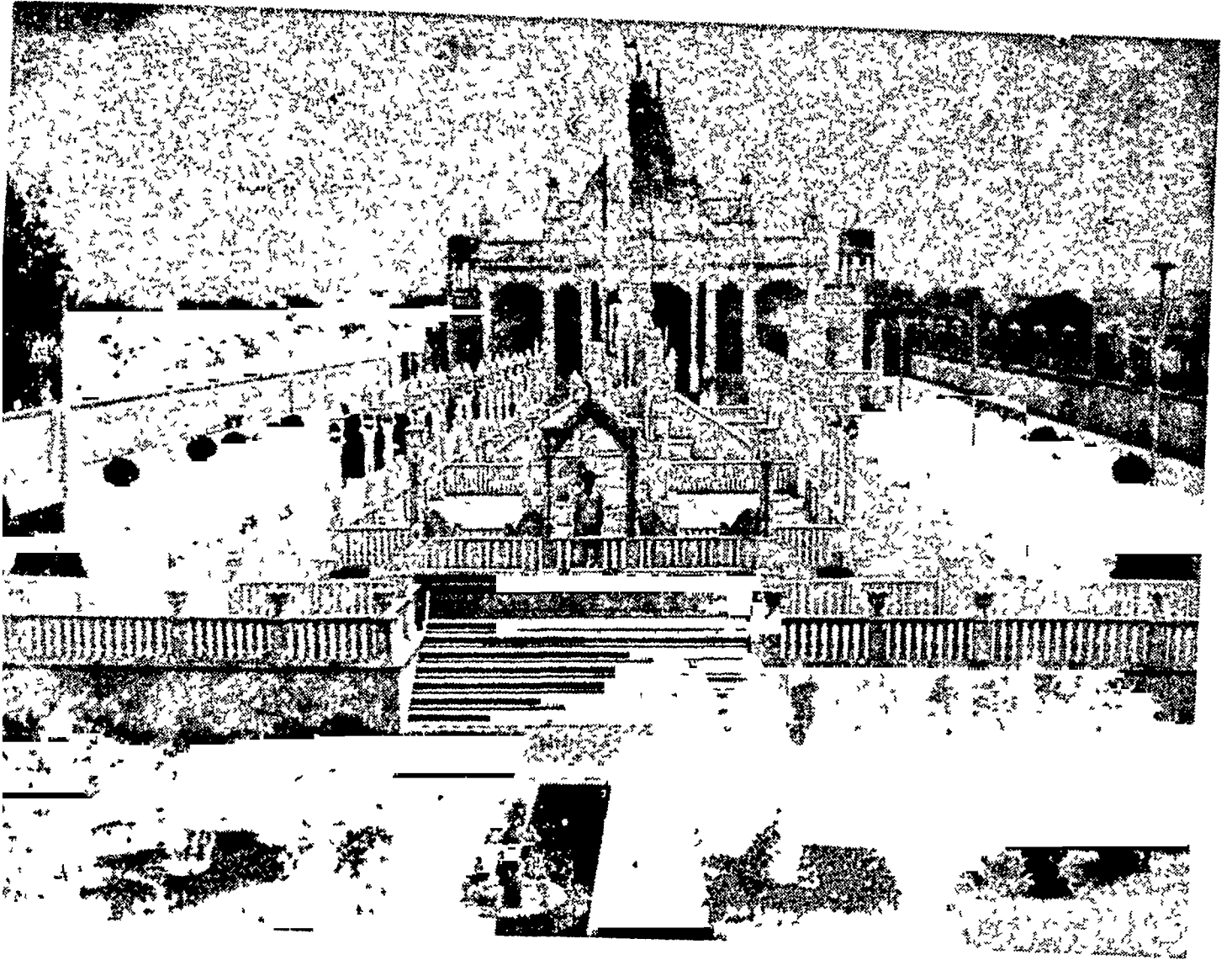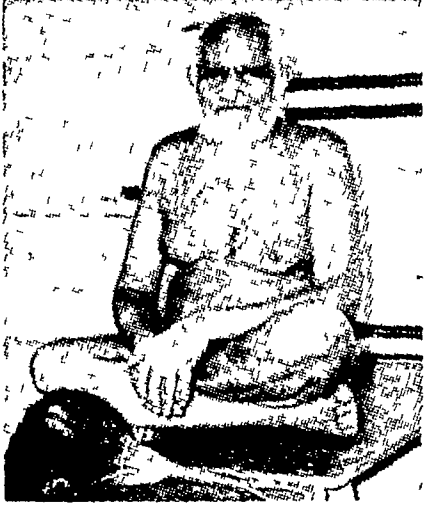
प० पू० आचार्य धर्मसागर जी महाराज का जीवन-परिचय

आपका जन्म जयपुर राज्य के घमेरा ग्राम मे स० १९७० मे पोष शुक्ला पूर्णिमा को खण्डेलवाल समाज के छाबडा गोत्र के परिवार मे हुआ था। आपके पिता का नाम बख्तावरमल जी एव माता का नाम श्रीमती उमराव बाई था। आपका बाल्य-काल का नाम चिरजीलाल था। बाल्यकाल मे ही आपके माता-पिता आपको अकेला छोडकर परलोक सिधार गए। परिवार मे आपके चाचा जी की पुत्री श्रीमती दाखाबाई के अतिरिक्त और कोई नही था। इसलिए दाखाबाई इन्हे अपने यहा बू दी के निकट बामणगाँव ले आई। वहाँ आकर आपने साधारण शिक्षा प्राप्त की तथा जीवनयापन के लिए १४ वर्ष की अवस्था मे ही एक छोटी सी दुकान खोल ली। लगभग २० वर्ष की अवस्था मे गाव छोड़कर इन्दोर चले गए। यहा आकर आपने कपडे का व्यापार प्रारम्भ किया।

सौभाग्य से कुछ दिनो के बाद यहा(इन्दोर मे) आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज का ससघ पदार्पण हुआ। आचार्य श्री के उपदेश से प्रभावित होकर आपने दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किए। यही से जीवन मे एक नया मोड आया। इसके पश्चात् बड नगर मे श्री चन्द्रसागर जी महाराज पधारे हुए थे, अत आप वहा उनके दर्शनार्थ पधारे। महाराज श्री के उपदेशो का आप पर इतना अधिक प्रभाव पडा कि आपने वही पर उनसे सप्तम प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार किए एव मन मे पूर्ण वैराग्य समा जाने से फिर साथ मे ही रहने लगे।

यहा से आप महाराज श्री के साथ-साथ विहार करते हुए नादगाव, कसावखेडा होते हुए वालूज (महाराष्ट्र) पहु चे। यहा पर आपने ससार को असार समझकर मिती चैत्र कृष्ण ७ सवत् २००० के दिन पू० श्री चन्द्रसागर जी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। दीक्षोपरात आपका नाम भद्र-सागर जी रखा गया। महाराज श्री के साथ रहकर आपने सर्वप्रथम चतुर्मास स० २००० मे अहून

(महाराष्ट्र) मे किया। पू० गुरुदेव का सत्सग आपको अधिक समय तक प्राप्त नही हो सका। अत्यधिक खेद के साथ लिखना पड रहा है कि चतुर्मास समाप्ति के बाद गिरनार यात्रा के लिए विहार करते हुए मार्ग मे ही बडवानी सिद्ध क्षेत्र पर सिहतुल्य प पू. आचार्यकल्प श्री चन्द्रसागर जी महाराज का फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा स. २००१ के दिन स्वर्गवास हो गया। गुरुदेव के वियोग हो जाने से आप प पू. श्री वीरसागर जी महाराज के सघ मे रहकर कई ग्रन्थो का अध्ययन करते हुए स० २००२ मे झालरापाटन, स० २००३ मे रामगज मण्डी व स० २००४ मे नैनवा, स० २००५ मे सवाई माधोपुर, स० २००६ मे नागोर, २००७ मे सुजानगढ मे क्षुल्लक रहते हुए चतुर्मास किए।

सुजानगढ चतुर्मास के बाद विहार कर आप सघ के साथ फुलेरा आए यहा आपने पच कल्याण के मध्य श्री वीरसागर जी से बैशाख मे ऐलक दीक्षा ली। तभी से आपका नाम धर्मसागर जी हुआ।

यहा (फुलेरा मे) चतुर्भास समाप्ति के बाद कार्तिक शुक्ला १४ स. २००८ मे परम् दिगम्बर मुनि दीक्षा धारण की तथा धर्मसागर जी नाम रखा गया। मुनि दीक्षा के बाद प्रथम चतुर्मास आचार्य श्री के साथ सवत् २००९ मे ईसरी किया तदुपरात सवत् २०१० मे नागौर, स० २०११ मे निवाई, स० २०१२ मे टोडारायसिंह, स० २०१३ एव २०१४ मे खानिया (जयपुर) मे किया। हार्दिक दु ख पूर्वक लिखना पडता है कि स २०१४ मे आसोज कृष्णा अमावश्या के दिन आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज स्वर्गस्थ हो गए। तत्-पश्चात् कार्तिक सुदी ११ सवत् २०१४ के दिन प० पू० १०८ श्री शिवसागरजी महाराज को आ श्री वीरसागर जी के पद पर आचार्य पद से विभू-षित किया गया। प पू आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज से पृथक होकर स २०१५ में वीर गाव (अजमेर) मे चतुर्मास किया। स २०१६ मे कालू, स २०१७ मे बू दी मे चतुर्मास किया। इस मध्य आपने सर्वप्रथम श्री राजमल जी को क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की तदुपरात स. २०१८ मे शाहगढ(बु देलखड) स २०१९ मे सागर (म प्र) स २०२० मे खुरई मे चतुर्मास किया।

यहा पर आपने बोद्धीसागर जी महाराज (पूर्व-नाम प० पन्नालाल जी)को क्षुल्लक दीक्षा दी। २ ब्रह्मचारिणियो को क्षुल्लिका दीक्षा तथा १ क्षुल्लिका को आर्यिका की दीक्षा प्रदान की। स. २०२१ मे इन्दोर चतुर्मास किया। यहा पर श्री जीवनलाल जी की मुनि दीक्षा वहुत ही ठाठ-बाट से हुई। स २०२२ मे झालरापाटन तथा स २०२३ मे टोक चतुर्मास किया। यहा क्रमश निर्मलसागर जी, महेन्द्रसागर जी, सयमसागर जी, दयासागर जी की क्षुल्लक दीक्षा हुई। स २०२४ मे बू दी चातु-र्मास हुआ। यहा पर महेन्द्रसागर जी को ऐलक दीक्षा, क्षुल्लक बोद्धीसागर जी तथा उपरोक्त तीन महाराजो की मुनि दीक्षा हुई। स. २०२५ मे बिजोलिया मे चतुर्मास हुआ।

चतुर्मास उपरात यहा से विहार करके शाती-वीर नगर की प्रतिष्ठा मे सम्मिलित होने के लिए श्री महावीर जी पधारे। पच कल्याणक प्रतिष्ठा के पूर्व ही आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज साधारण ज्वर से पीडित होकर अचानक ही मिति फाल्गुन कृष्णा ३० के दिन मध्याह्न समय मे समाधि को प्राप्त हो गए। अत फाल्गुन शुक्ला ८ स २०२५ के दिन उनका आचार्य पद आपको प्रदान किया गया। इसी दिन आपके कर कमलो से ६ मुनि, २ आर्यिका तथा २ क्षुल्लक तथा १ क्षुल्लिका इस प्रकार ११ दीक्षाए हुई। उनमे खासकर सनावद (म०प्र०) निवासी पोरवाड समाज के १९ वर्षीय नवयुवक श्री यशवन्त कुमार जी ने बिना कोई प्रतिमा धारण किए एकदम सीधी अद्वितीय मुनि दीक्षा धारण की। वही से श्री

महावीर जयती के महान अवसर पर आचार्य श्री विमलसागर जी भी अपने संघ सहित पधारे थे ।

उस समय श्री महावीर जी मे अभूतपूर्व दृश्य उपस्थित हो गया । साधुओ का इतना विशाल समुदाय (२३ मुनीराज, १० क्षुल्लक तथा लगभग ४० आर्यिकाएं एव क्षुल्लिकाए कुल मिलाकर लगभग ७३ साधु) कही पर भी सैकडो वर्षों पूर्व भी देखने मे नही आये । फिर आप अपने विशाल सघ (१७ मुनीराज, २५ आर्यिकाए, ४ क्षुल्लक एव १ क्षुल्लिका) को लेकर खानिया (जयपुर) पधारे । यहा एक आश्चर्यकारी घटना घटी । श्री वर्द्धमान सागर जी की एक बार अकस्मात नेत्रो की ज्योति चली गई थी जो कि पू पाद कृत शाति भक्ति के महात्मय से पुन प्राप्त हुई । इस प्रकार यहा भक्ति का एक अपूर्व प्रभाव सभी ने प्रत्यक्ष देखा । इस समय से आप ससघ (१२ मुनिराज, १६ आर्यि- काए तथा ३ क्षुल्लक सहित) जयपुर शहर मे बक्षीजी के मदिर मे चतुर्मास हेतु पधारे । यहा आपकी प्रेरणा से शातिवीर दिगम्बर गुरुकुल की स्थापना हुई । दि १७ ६.१९६६ को ब्र. शातिबाई मुज्जफरनगर की आर्यिका दीक्षा आपके ही कर कमलो से हुई । जयपुर जैन समाज के इतिहास मे यह प्रथम विशाल दीक्षा समारोह का अवसर था ।
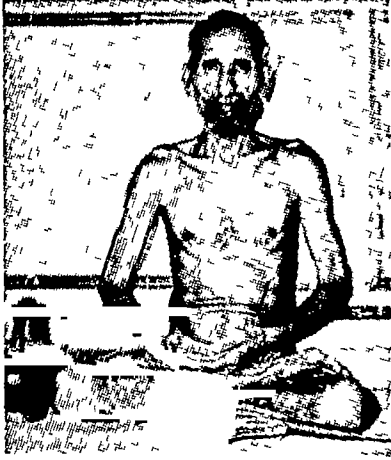
१०८ मुनि श्री संयमसागर जी महाराज का जीवन-परिचय

आपका जन्म स १९७० मे बूदी मे हुआ। आपके पिता का नाम भवानीशकर जी था। आप भगेरवाल जैन कुल के थे आपका मुख्य धन्धा काश्तकारी एव व्यापार था।

आप बचपन से ही धर्म से आकृष्ट थे। गृहस्थ अवस्था मे भी आप ध्यान मे लीन रहते थे। व्यवसाय की विभिन्न घटनाओ से आपको भारी आघात पहुचा। तथा आपने जग को आसार पाया। आप २–३ बार घर छोडकर सघ के साथ रहे किन्तु घर वाले आपको जबरदस्ती वापस ले गये। परन्तु आपका ध्यान तो कही और लग चुका था। बूदी मे श्री धर्मसागर जी महाराज का चतुर्मास हुआ उसमे आप इनके वहुत निकट आ गये। परिणामस्वरूप आपने सवत् २०२३ मे टोक मे क्षुल्लक दीक्षा एव २०२४ बूदी मे मुनि दीक्षा आचार्य धर्मसागर जी महाराज से ले ली। नियमो के प्रति आप बहुत कठोर है। आपकी अहार की चर्या वहुत कठिन है। आप सदैव गरीबो का भला एव मानव मात्र मे परोपकार की भावना की कामना करते हैं।

१०८ मुनि श्री बुद्धिसागर जी महाराज का जीवन-परिचय

आपका जन्म का नाम मोहनलाल था। आपका जन्म उदयपुर जिले के वलभनगर तहसील के एक कस्वे मीण्डर के एक नरसिंहपुरा जाति, फान्दोल गोत्र, दि जन सम्प्रदाय मे सवत् १६७५ मे मगसर शुक्ला २ को माता भूरी बाई की कोख से हुआ। आपके पिता का नाम चम्पालाल जी था जो अपने समाज के जाने माने व प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। धार्मिक अभिरुची आप मे कूट-कूट कर भरी हुई थी जिसका आप पर गहरा प्रभाव पडा।

आपके समय मे आपके कस्बे मे धार्मिक व लौकिक शिक्षा अल्प थी, फिर भी आपने धार्मिक शिक्षा ग्रहण की। आप प्रगतिशील युवक थे, अध-विश्वासो एव रूढियो का आपने खुलकर विरोध किया। आप कुछ समय तक वकीलो एव मजिस्ट्रेटो के सम्पर्क मे रहे, आपने कानून का अच्छा अध्ययन किया परन्तु आप उपाधि प्राप्त नही कर सके क्योकि, आपका कपडे का व्यापार इतना बढ गया था कि समय निकालना मुश्किल था।

स्वतन्त्र विचारो के नाते आपने तत्कालीन राजा महाराजाओ का खुलकर विरोध किया। आपने स्वतन्त्रता के लिए हुए आन्दोलनो मे बराबर भाग लिया तथा स्वतन्त्रता के बाद भी राजनीति मे भाग लेते रहे। प्राय सभी मुख्य दलो मे आपने भाग लिया। वही आपके दिल को ठेस पहुची। भ्रष्टाचार व अनैतिकता को आप बर्दास्त नही कर सके और आपको नफरत सी पैदा हो गयी। आपने जीवन का गहराई से अध्ययन किया और पाया कि इसमे शाति और सुख नही है।

ऐसे ही समय मे प पू शिवसागर जी महाराज का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ। उस समय आर्य कल्प महाराज श्री श्रुतसागर जी ने आशीर्वाद स्वरूप कहा भैया नेतागिरी धर्म की करो। इन शब्दो ने आपके विचारो को तत्क्षण बदल दिया और आपने वही ५ प्रतिमा धारण की तत्पश्चात् ७ प्रतिमा भी धारण की। इसके बाद आप दो वर्ष तक ग्रहस्थाश्रम मे रहकर शास्त्रो का अध्ययन

करते रहे । पर आपको चैन कहा था आपको तो एक लगन लग चुकी थी । और आपने तीसरे वर्ष प्रतापगढ मे आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज के पास क्षुल्लक दीक्षा के लिए श्रीफल चढाया किन्तु दीक्षा श्री महावीर जी मे होने का आदेश हुआ । श्री महावीर जी पहुचने पर आचार्य श्री का समाधिमरण हो गया । परन्तु होनहार टल नही सकता आप श्री महावीर जी पचकल्याण प्रतिष्ठा मे पहुचे और वही दीक्षा लेने का निश्चय किया । और वही आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज से दीक्षा ग्रहण की । ६ माह बाद ही कार्तिक सुदा १२ सवत् २०२६ को जयपुर मे मुनि दीक्षा प्राप्त की ।

आपका अध्ययन निरतर चन्द्र की चन्द्रकलाओ के समान अबाध गति से बढ रहा है। आपके उपदेश बडे मार्मिक होते है। जिससे क्या जैन क्या अजैन सभी प्रभावित होते है। आपने युवको को विशेष रूप से प्रभावित किया है। आपने अनेक अजैनियो से शराब व मास तथा रात्री भोजन का त्याग करवाया है ।
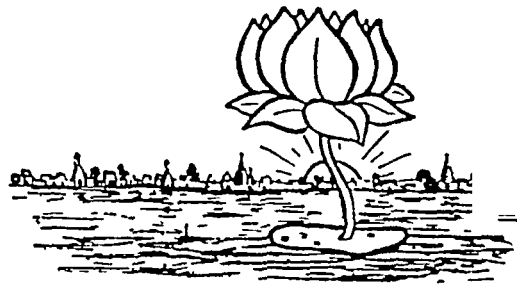
आतिथ्य रूप मासर महावीरस्य नग्नहु ।
रूपमुपसदामेतत्तिस्रो रात्री सुरासुता ।।

यजुर्वेद अध्याय १६ मंत्र १४

निगत्थो आवुसो नाथपुत्तो सव्व दरस्सी ।
अपरिसेसे णाण दस्सरण परिजानाति ।।

बौद्ध ग्रन्थ मज्झिम निकाय भाग १ पृ ६२-६३
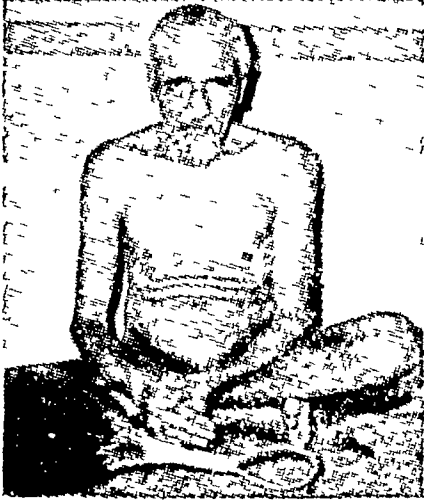
१०८ मुनि श्री पदमसागर जी महाराज का जीवन-परिचय

आपका जन्म महाराष्ट्र प्रान्त के कोल्हापुर जिले मे अकीवाट नाम के ग्राम मे सन् १९०९ मे हुआ। आपके पिता का नाम चन्पा तथा माता का नाम गगाबाई था। आपका जन्म का नाम अन्नु था। आपका अध्ययन कन्नड भाषा मे हुआ। आपका धन्धा काश्तकारी था।

आपका विवाह १८ वर्ष की आयु मे हो गया। आपके २ पुत्र एव चार पुत्रिया थी। आपके ग्राम मे जिन मदिर था फिर भी आप नियमित मदिर तक नही जाते थे। एक बार आपके यहा पचकल्याण महोत्सव हुआ। उसमे आर्यसागर जी महाराज का ३ दिन तक अहार नही हुआ और चौथे दिन अन्तराय आ गया। उनकी भक्ति एव दृढ इच्छा से आप प्रभावित हुए उन्होने आपको नियम दिलाये। फिर आपको आध्यात्म से लगाव पैदा हो गया। और क्षुल्लक दीक्षा नेमसागर महाराज से २५-२-१९६६ को वीरगाव मे तथा मुनि दीक्षा समेदशिखर जी मे २२-३-७० पुष्पदतसागर जी से ली। आप आत्म-कल्याण के लिए प्रयत्नशील है। हिन्दी का अध्ययन भी कर रहे है।
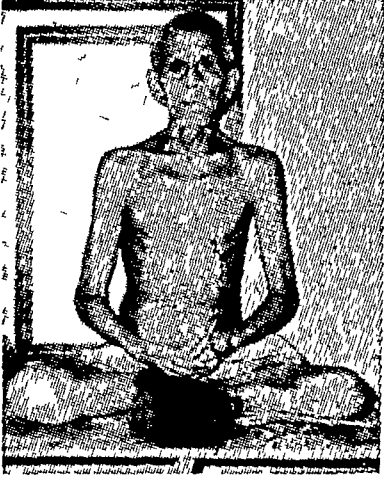
१०८ मुनि श्री सुदर्शन सागर जी महाराज का जीवन परिचय

आपका जन्म वि० स० १९५५ मे कोटा के पास इन्द्रगढ कस्बे के पास एक छोटे से गाव ककरावता मे हुआ। आपका जन्म का नाम कवरलाल था। पिता का नाम विसनलाल था। ये मध्यमवर्गीय दि. जैन परिवार से सम्बन्धित थे।

पढाई की सुचारु रूप से व्यवस्था न होने पर आपको सामान्य शिक्षा ही उपलब्ध हो सकी। आपका झुकाव बचपन से सासारिक पदार्थो मे न होकर आत्म-चिन्तन की ओर था। आत्म-चिन्तन की इस अग्नि को प्रज्वलित किया आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज ने जहा आपने दो प्रतिज्ञा धारण की। तत्पश्चात् आपका झुकाव इस ओर बढता चला गया तथा कुछ समय पश्चात् ही ५ प्रतिमा आचार्य श्री धर्मसागर जी से धारण की। ७ प्रतिमा भागलपुर मे सन्मतीसागर जी से धारण की इस बीच आपने विभिन्न ग्रन्थो का व्यापक अध्ययन किया।

वीर स वत् २४९५ मे घाटोल जिला बासवाडा मे पचकल्याण महोत्सव हुआ उसमे आपने जयसागर जी महाराज मे क्षुल्लक की दीक्षा ग्रहण की आपको इस समार मे बार-बार के आवागमन-अशान्ति से नफरत हो चुकी थी परिणामस्वरूप आपने आत्म-कल्याण हेतु १०८ आचार्य श्री धर्मसागर जी से ७४ वर्ष की अवस्था मे मिती मगसर सुदी ६ बुद्धवार २०२९ तारीख ६-१२-७२ को सुजानगढ में मुनि दिक्षा ग्रहण करली। अब आपका नाम श्री १०८ मुनि सुदर्शनसागर जी रखा गया। आपका ध्यान यही रहता है—

भावना दिन रात मेरी सब सुखी स सार हो।
सत्य स यम शील का घर-घर व्यवहार हो।

पूज्य श्री १०५ विदुषी आर्यिका जिनमती माताजी

आपका जन्म महाराष्ट्र प्रान्त के म्हसवड ग्राम मे सन् १९३३ मे हुआ। आपके माता-पिता का नाम क्रमश किस्तूरी वाई और फूलचन्द जी था। आपका जन्म का नाम प्रभावती रखा गया। बाल्य अवस्था मे ही आपके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया। इस प्रकार आपका पालन-पोषण आपके नाना के यहा हुआ जो निसन्तान थे। इसलिए आपका पालन-पोषण बहुत लाड-प्यार से हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम मे ही हुई। आपका ध्यान प्रारम्भ से ही आध्यात्म चिन्तन की ओर आकर्षित था।

आपके दिल मे उस समय बडी ठेस पहुँची जब आपके मामा मामी का स्वर्गवास १९ वर्ष की आयु मे ही हो गया। आप ससार से विरक्त रहने लगी। ऐसे ही समय मे आपका परिचय श्री १०५ विदुषी आर्यिका ज्ञानमती जी से हुआ। आप उनसे बहुत प्रभावित हुई। तथा इन्ही के सघ के साथ हो गई।

२३ वर्ष की अल्प आयु मे ही जयपुर के पास माधोराजपुरा मे क्षुल्लिका दीक्षा आचार्य वीरसागर जी महाराज से ले ली। तथा २९ वर्ष की आयु मे सीकर मे ही आपने श्री शिवसागर जी से आर्यिका दीक्षा ली।

ज्ञानमती माता जी आपकी शिक्षा गुरु रही हैं। जिनके पास इन्होने विभिन्न ग्रन्थो का व्यापक अध्ययन किया। न्याय, सिद्धान्त, व्याकरण, काव्य, छन्द, अलकार आदि विषयो का आपको व्यापक ज्ञान है। आपके उपदेश बडे मार्मिक एव तार्किक होते है। जिससे आज का शिक्षित वर्ग विशेपकर युवा वर्ग आपसे विशेष प्रभावित हुआ है।

पुज्य श्री १०५ आर्यिका विमलमती माताजी

आपका जन्म वि स. १९६० मे वगाल प्रान्त के अण्गावाद ग्राम मे हुआ। आपके पिता का नाम छोगमल जी था जो वहा व्यापार करते थे। आपकी सामान्य शिक्षा ही हुई। ९ वर्ष की आयु मे आपकी शादी कुचामण मे करदी। आपका वचपन का नाम फूली बाई था। आपके ३ पुत्र एव ३ पुत्रियाँ उत्पन्न हुई।

आपके पति बहुत ही धार्मिक विचारो के थे। इस प्रकार गृहस्थ मे रहते हुए भी व्यापक नियमो का पालन करते हुए आनन्द से गुजारा कर रहे थे। आपकी दीक्षा का ममारोह भी आनन्दित करने वाला था। जब पति-पत्नी दोनो ने एक-साथ इस नाशवान ससार मे नाता तोडकर सुजानगढ मे वि स २०२५ मे क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की। इसके ठीक तीन वर्ष पश्चात् २०२८ मे आर्यिका दीक्षा आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज से ग्रहण की। तव से आप इमी सघ मे है।

अहिंसा तत्त्व को यदि किसी ने अधिक से अधिक विकसित किया तो वे महावीर स्वामी थे।

—राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

पूज्य श्री १०५ आर्यिका संभवमती माताजी

आपका जन्म सवत् १६६० मे अजमेर जिले के रीड ग्राम मे हुआ । माता का नाम राजमती बाई एव पिता का नाम पन्नालाल जी बज था । आपकी सामान्य शिक्षा ही हुई किन्तु धार्मिक शिक्षा से आपको बचपन से ही लगाव था ।

ग्यारह वर्ष की अल्प आयु मे ही आपकी शादी करदी गई । शादी के ३ वर्ष पश्चात् ही अर्थात् १४ वर्ष की आयु मे ही आपके पति का स्वर्गवास हो गया था । आपकी आत्मा को बडी ठेस पहु ची । ससार के जन्म-मरण के घटना-चक्र का आपके बाल मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पडा । आप ससार से विरक्त सी रहने लगी । और इस प्रकार ५५ वर्ष की आयु तक आप गृहस्थ मे रहकर आध्यात्म चिन्तन करती रही ।

ऐसे ही समय मे शिवसागर जी महाराज का अजमेर मे चर्तुमास हुआ । आप उनके उपदेशो से प्रभावित हुई । और आज से १४ वर्ष पूर्व अर्थात् सम्वत २०१६ मे वही आचार्य महाराज से आर्यिका दीक्षा ले ली । तथा इसी सघ मे आप आध्यात्म चिन्तन मे लीन है ।

पूज्य श्री १०५ आर्यिका सिद्धमती माताजी

आपका जन्म जयपुर के पास खोर नामक ग्राम मे हुआ। आपकी माता का नाम बच्ची बाई और पिता का नाम केशरचन्द था। आपका बचपन का नाम कल्ली बाई था। आपकी शिक्षा सामान्य ही हुई। आपके माता-पिता का स्वर्गवास २।। वर्ष की अल्प आयु में ही हो गया था। आपके भाई ने आपका पालन-पोषण किया।

आपकी शादी जयपुर मे हुई थी। किन्तु आपके पति का स्वर्गवास १८ वर्ष की अल्प आयु मे ही हो गया। आपका ध्यान अब गृहस्थ से हट कर वैराग्य की तरफ आकर्षित होने लगा। आप गृहस्थ मे रहते हुए ही आध्यात्मिक चिन्तन मे लीन रहती थी। क्योकि आपको इस शरीर से क्षणिक विनाश का कटु अनुभव था।

आपने ४५ वर्ष की आयु मे शिवसागर जी महाराज से ५ और ७ प्रतिमा के व्रत धारण कर लिए। तत्पश्चात् ४ वर्ष पूर्व जयपुर मे आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज से आर्यिका दीक्षा ले ली।

पूज्य श्री १०५ आर्यिका शुभमती माताजी

आपका जन्म मध्यप्रदेश प्रान्त के सागर जिले के एक कस्बे खुरही नगर मे सन् १९४७ मे हुआ। आपकी माता का नाम शान्तीबाई एव पिता का नाम गुलाबचन्द था। आपका जन्म का नाम विमला था। आपका स्कूल का अध्ययन मिडिल तक हुआ।

आप बचपन से ही धार्मिक विचारो से ओतप्रोत थी। आपके वैराग्य विचारो का आभास आपके माता-पिता को हो गया था इसलिए आपकी शादी के लिए प्रयत्न करने लगे। किन्तु उसी समय खुरही नगर मे आचार्य धर्मसागर जी महाराज का चतुर्मास हुआ। सघ मे वासमती माताजी वगैरह थे। आप को बस फिर क्या चाहिए था। आप इनसे इतनी आकर्षित हुई कि इतनी अल्प आयु मे ही इनके साथ हो गई। माता-पिता ने लाख समझाया मगर आप कहा मोह जाल मे फसने वाली थी आपको तो वैराग्य से स्नेह हो चुका था।

आप १० वर्षों तक निरन्तर गहन शास्त्रीय अध्ययन मे सलग्न रही। तथा शास्त्रीय परीक्षाए पास की। अध्ययन समाप्त कर सन् १९७१ मे अजमेर नगर मे आपने आचार्य श्री धर्मसागर जी से आर्यिका दीक्षा ले ली।

आध्यात्मिकता के प्रति इतना गहरा लगाव एव दृढ निश्चय से आपने इस ससार को त्याज्य समझकर दीक्षा ग्रहण की उस समय उपस्थित भारी जन समुदाय के आखो मे भी आसू भर आए। आप युवा वर्ग के लिए एक आदर्श है। आपके त्याग और तपस्या का चित्र खीचना लेखनी के बस की बात नही।

पूज्य श्री १०५ ऐलक कीर्तिसागर जी

बीच मे—एलक श्री कीर्तिसागरजी दाये—श्री उदयसागरजी बाये—क्षुल्लक भद्रसागरजी

आपका जन्म टोंक मे सवत् १६७४ की भादवा वदी अष्टमी को हुआ। आपके पिता का नाम गोरीलाल एव माता का नाम दाखा बाई था। आपका जन्म का नाम शोभागमल था। आपके पिता का स्वर्गवास ६ माह तथा माता का ६ वर्ष की आयु मे ही हो गया। भाई ने आपका पालन पोषण किया।

आप आजीविकोपार्जन के लिए कुनणमल जी सेठी सुजानगढ के पास रहे जो धार्मिक विचारो से ओत-प्रोत है। इनका आप पर गहरा प्रभाव पडा। आपने शादी नही की। सुजानगढ मे रहकर आचार्य श्री के उपदेशो का श्रवण करते रहे जिनका असर आप पर हुआ।

सवन् २०१५ मे आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज से आपने ७वी प्रतिमा का व्रत धारणकर स २०२६ लाडनू मे आचार्य धर्मसागर जी महाराज का चतुर्मास हुआ उनके उपदेशो के प्रभाव से माह सुदी २ को आपने क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली। इसके पश्चात् आचार्य श्री से ही फतेहपुर मे वेदी प्रतिष्ठा के समय ऐलक दीक्षा ग्रहण की।

पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक भद्रसागरजी

आपका जन्म सवत् १६७४ मे सुनेल जिला झालावाड मे हुआ है। आपके पिता का नाम मुलाकीचन्द एव माता का नाम केशरवाई था। आपका वचपन का नाम सूरजमल पोटलिया था। आप गल्ले का व्यापार करते थे। आपने शादी नहीं की।

आप बचपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। परन्तु जब आप टौक पचकल्याण मेले मे दर्शन करने आये उस समय आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज वहाँ थे। आपको साधुओ के सम्पर्ग से चैन मिला और वही आचार्य महाराज से ७ प्रतिमा के व्रत धारण कर लिये।

परन्तु फिर सन्तोष कहा था आपको तो लौ लग चुकी थी और अजमेर मे जहा आचार्य महाराज धर्मसागर जी का चतुर्मास था आपने क्षुल्लक दिक्षा ले ली।

१०५ क्षुल्लक श्री उदयसागर जी महाराज

आपका जन्म वि. स १९५८ मे कुचामन सिटी मे हुआ। आपके पिता का नाम छगनमल जी एव माता का नाम छोटी बाई था। आपका जन्म का नाम चन्दनमल जी था। आपका सबध जमीदारो से था तथा आप व्यवसाय भी करते थे।

आपकी शादी १२ वर्ष की अवस्था मे ही हो गई थी। आपकी पत्नी अत्यन्त धार्मिक विचारो की महिला थी। फलतः गृहस्थ मे रहते हुए भी आप धार्मिक कार्यों मे लीन रहते थे। तथा मुनियो के सग रहते थे। आखिर सगत का असर तो आता ही तथा प्रथम बार आपने फुलेरा मे २ प्रतिमा के व्रत आचार्य वीरसागर जी महाराज से धारण किए। परन्तु आपको सन्तोष कहा था आप तो आत्म शान्ति प्राप्त करना चाहते थे, परिणामस्वरूप आपने सवत् २०२५ मे पत्नी सहित सुजानगढ मे आचार्य धर्मसागर जी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। अजीब दृश्य था जब दोनो जीवन साथियो को ससार से विरक्ती भी एक साथ हुई हो। ऐसा बहुत कम होता है।

भगवान महावीर....

एक महानतम विभूति !

० श्रीमती पुष्पा छाबड़ा, सीकर

भगवान महावीर एक महान विभूति थे। वह थे और रहेंगे। युग आये और चले गये। युग आयेंगे और चले जायेंगे, पर महावीर स्वामी की कीर्ति-गाथा धरती पर सदैव गू जती रहेगी। वह देवो के भी देव थे अमरो के भी श्रद्धा-पात्र थे। देवता भी उनकी वन्दना करते थे। उनके यशोगान से अपने मनमानस को पवित्र करते थे। ऋद्धिया-सिद्धिया उनके चरणो मे लौटती थी। पर भगवान महावीर ने इस बात को कभी महत्व नही दिया। यद्यपि अलौकिक शक्तिया उनको प्राप्त थी, साथ ही उनके भीतर देवताओ की विभूतिया विद्यमान थी किन्तु वे उनकी ओर से आख मू द कर सदैव पवित्राचरण के कटका-कीर्ण मार्ग पर चलना ही श्रेयस्कर मानते थे। वह लोक कल्याणकारी मार्ग को अपनाने वाले थे। वह लोक कल्याण के लिए निरन्तर साहसपूर्ण कदम उठाते रहे, कार्य करते रहे। अपने पवित्र आचरणो और दिव्यज्ञान की ज्योति से जन–जन के हृदय को आलोकित करते रहे। वह अपने आचरण व देवोपम व्यवहारो से महान बने। इतने महान कि भगवत्ता के स्वर्ण सिंहासन पर आसीन हो गये। आज कोटि-कोटि मानव उन्हे वीतराग भगवान मान कर ही उनकी पूजा करते है। उनके पवित्र चरणो मे अपनी श्रद्धा निवेदित करते है।

भगवान महावीर का जन्म धरती पर लोक-कल्याण के लिए ही हुआ था। दूसरे शब्दो मे वे स्वय ईश्वर के प्रतिरूप थे, ईश्वर थे। पर कभी उन्होने अपनी भगवत्ता का प्रदर्शन नही किया। इसके प्रतिकूल वे काटो की राह चल कर यन्त्रणाओ को सहते हुये सदा जीवन के लिये प्रशस्त मार्ग बनाते रहे। उन्होने कठिन से कठिन तप करके काम वासनाओ से युद्ध करके, आसक्तियो से सघर्ष करके लोक-कल्याण की ऐसी उज्जवल राह निकाली जिस पर चलकर मनुष्य सचमुच वास्तविक सुखो को प्राप्त कर सकता है। वह सच्चे कर्म योगी,

महान दार्शनिक आत्म द्रव्य व जीवन क्षेत्र के अमर योद्धा थे। उनके नाम के साथ उनका 'महावीर' विशेषण इसलिये उपयुक्त है।

महावीर जीवन के विभिन्न क्षेत्रो से होकर निकले। उन्होने जीवन के जिस किसी क्षेत्र मे प्रवेश किया, उसमे अपने आचरण व व्यवहारो का मान बिन्दु स्थापित किया। उन्होने स्वय लोक-कल्याण के लिए कष्ट सहे। उनके मार्ग मे बडी-बडी बाधाए आयी, दानवो ने उनको आगे बढने से रोका पर वह सबको पराजित कर आगे बढते गये, और इतने आगे कि भगवान बन गये।

भगवान महावीर के जीवन का एक महान लक्ष्य था। वह जीवन मे उठना चाहते थे। वह आत्मा थे, परमात्मा बन जाना चाहते थे। जीवन के प्रथम चरण से ही वह अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होने लगे। अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये उन्होने समता, सहिष्णुता, अभय, अहिंसा और अनासक्ति को सबल के रूप मे ग्रहण किया। वह अपनी इन्ही शक्तियो से, विघ्न बाधाओ से सघर्ष करते हुये आगे बढे और अपने लक्ष्य को प्राप्त करके कोटि-कोटि मानव के श्रद्धा-पात्र बने।

महावीर ने कभी अपने लिए किसी वस्तु की कामना नही की। वे जीवन के प्रथम चरण से लेकर अन्त तक कामनाओ के जाल को ही तोडते रहे, छिन्न-भिन्न करते रहे। वह सुखो और भोगो को तजकर इस जग के जीवन पथ पर चलते रहे। जिस दुख को ससार छोड कर चलता है, जिस दुख से ससार भयभीत रहता है, उसी दुख को उन्होने सहर्ष अगीकार किया। अपने महान पुरुषार्थ से उसे परास्त किया। कितनी ही बार ससार के दुखो ने दानवो की भाति आगे बढ कर उन्हे रोका, उनके पथ मे शिलाए बिछाई, पर वे एक क्षण के लिये भी विमुख नही हुये। वे अपने अजेय पुरुषार्थ के धनी थे। वे आगे बढते गये, त्रिविध तापो को पछाडते गये। धन्य था उनका पौरुष। वन्दनीय था उनका साहस। उनके पौरुष और साहस ने ही तो उन्हे जन-जन के हृदय मे महावीर के रूप मे प्रतिष्ठित किया। आज वे इसी रूप मे जन-जन मे चर्चित व अर्चित किये जाते हैं।

धन्य थे वे और धन्य था उनका व्यक्तित्व।

क्रांतिकारी महावीर और अहिंसा

० कैलाश जयपुरिया, सीकर

भगवान महावीर का जन्म ऐसे समय मे हुआ था, जव धर्म, धर्म न रहकर आडम्बरो, क्रियाकाडो और अन्धश्रद्धाओ का प्रतीक वन गया था। जो धर्म प्राणिमात्र को अभयदाता, सुखशान्ति प्रदाता है, उसे विकृत कर हिंसा, अन्याय, पक्षपात् भ्रष्ट-कार्यकलापो का अड्डा बना लिया गया था। वर्ग विद्वेष व जाति-विद्वेष का वोलवाला था। पशु, स्त्रीवर्ग, शूद्रवर्ग के साथ अत्यन्त क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया जाता था। स्त्रियो को धर्म-सेवन तक का अधिकार नही था और शूद्रो से धर्म श्रवण करने तक का भी अधिकार छीन लिया था। पशुओ के प्रति तो महान निर्दयता का व्यवहार किया जाता था, उन्हे वलिस्थानो व यज्ञो मे वडी वेरहमी के साथ मारकर जला दिया जाता था और यज्ञो मे जीवित आहूत किया जाता था जिसे धार्मिक अनुष्ठान का नाम दिया जाता था। यज्ञो को स्वर्गादि की प्राप्ति का साधन वताया जाता था। सर्वत्र भीषण अशाति और हृदय विदारक हाहाकार था।

ऐसे विकट व अशात समय मे भगवान महावीर का जन्म हुआ। उन्होने उस समय के वातावरण पर दृष्टि डाली और सर्वत्र क्षुब्ध प्राणिवर्ग को देखा और द्रवित हो उठे। राजसी ऐश्वर्य व भोग, पिता का प्यार, माता की ममता और परिवार का मोह उन्हे न रोक सका और महामानव महावीर पूर्ण यौवनावस्था मे गृह त्यागी वने। वारह वर्ष तक एकान्त वन में रहकर आत्म-साधना की और केवल ज्ञान प्राप्त किया। उन्होने जगह-जगह विहार कर उस वक्त के फैले हुए अज्ञान, कुरीतियो और कुरूढियो को मिटाकर सही ज्ञान दिया, नई दिशा दी और धर्म का सच्चा स्वरुप दिखाया।

भगवान वीर का चिरतन सन्देश है, 'जीओ और जीने दो' Live and let live आज इसके विपरीत मनुष्य की प्रवृत्ति हो रही है। एक दूसरे का अप-

मान करना, पीडा देना, दूसरे के धन का अपहरण करना आदि । अपने स्वार्थ के लिए मनुष्य हिसा झूठ, चोरी आदि कुकर्मों को कर डालते है । क्या यह मानवता है ? यह कौन सी दया है ? यह क्या धर्म है ? दूसरे को सताना क्या कभी आत्म सुख का साधन हो सकता है ? कभी नही ।

यदि सुख चाहिए तो भगवान महावीर के पद चिह्नो पर चलकर ही मिल सकता है । धर्म क्या है ? 'अहिंसा परमोधर्म: यतो धर्मस्ततोजय ' अर्थात् जीव पर दया करना, प्राणिरक्षण करना अहिसा है और अहिंसा ही धर्म, धर्म ही जय का डका है । धर्म ही इस लोक और परलोक मे सुख का साधन हे । अत ससार मे सुख और शाति स्थापित करने के लिए धर्म का झण्डा फहराना आवश्यक है। प्रत्येक नवयुवक को चाहिए कि शिथिलाचार, अनाचार और अत्याचार की प्रवृत्ति को त्याग कर सच्ची भावना से अहिंसा का प्रचार करे । भगवान महावीर ने कहा कि "जीवन सभी प्राणियो को प्रिय है, किसी भी जीव को मन, वचन और काम से कष्ट नही देना चाहिए । यदि आज हम इस कथन की सत्यता समझते तो आये दिन ये तोड-फोड, विद्यार्थियो की हडताले, हिंसात्मक कार्य-वाहियाँ, शिक्षक आन्दोलन, श्रमिक आदोलन, कृषक आन्दोलन, कर्मचारी आन्दोलन, मजदूर-मालिक आन्दोलन आदि की समस्याये हमारे सामने न रहती । महात्मा गान्धी ने भी भगवान महावीर के अहिंसा के सिद्धान्त पर ही भारतवर्ष को अग्रेज शासको की गुलामी मे जकडी जजीरो से मुक्त कराने मे सफलता प्राप्त की थी ।

आज ससार का वातावरण हिंसात्मक है । मनुष्य आज ऐसे शस्त्रो, बमो आदि के निर्माण मे व्यस्त है जिसका दुरुपयोग करने पर एक राष्ट्र तो क्या सारे मनुष्य जाति का अस्तित्व ही समाप्त किया जा सकता है । मानव आज वैज्ञानिक शक्तियो से देश को प्रगतिशील बनाने के कार्यो मे लगाने की अपेक्षा अन्यत्र काम मे ले रहा है ताकि वह अपने दुश्मन राष्ट्र को अधिकाधिक हानि पहुँचा सके । वैज्ञानिक शक्ति का इस प्रकार दुरुपयोग किया जा रहा है ।

आज आवश्यकता महावीर के सिद्धान्तो का पालन कर इस शक्ति को उचित दिशा मे प्रयोग करने की है ताकि यही शक्ति मनुष्य के लिए अभि-शाप साबित होने की अपेक्षा वरदान सिद्ध हो ।

अगले वर्ष १९७४ मे भगवान महावीर का २५००वाँ निर्वाण महोत्सव बडी धूमधाम, उत्साह और उल्लास से मनाया जाने वाला है । ऐसे समय मे आवश्यकता महावीर की वाणी को जीवन मे अपनाकर जीवन-यापन करने की है । इस दिशा मे विशेषत नई पीढी को आगे आने की चुनौती है कि वह अपनी शान-शौकत, फैशनपरस्ती, पाश्चात्य खान-पान, चाल-चलन, विचार-व्यवहार का परि-त्याग कर शाश्वत धर्म-जैन धर्म के सिद्धान्तो का, जिनका भगवान महावीर ने अपने उपदेशो मे उद्-बोधन किया, पालन करे जिससे मानव-मानव मे सद्भाव और सभी को 'जीओ और जीने दो' का अवसर मिले तथा विश्व मे शाति की स्थापना हो । यदि नई पीढी उनका पालन करने का सकल्प लेती है तभी महावीर का निर्वाणोत्सव मनाने की सार्थ-कता सिद्ध करेगी ।

हमारी आत्मा परमात्मा क्यों नहीं बनी

राजकुमार जैन, जयपुर

प्रत्येक प्राणी ईश्वर है। उसमे ईश्वरत्व है, पर उसका ईश्वरत्व उसी के कर्मावरण से दबा हुआ है। छिप गया है। जब कर्मावरण को हटाया जायेगा तो वहाँ ईश्वरत्व चमक उठेगा।

आत्मा से परमात्मा बनने के लिए विशिष्ट क्रियायें चाहिये, विशिष्ट ज्ञान चाहिये, तभी जाकर आत्मा परमात्मा बन सकेगी। छोटे से बीज मे महान वृक्ष समाया हुआ है। उस छोटे से बीज को विशिष्ट बोध क्रिया आदि के द्वारा धरती पर डाला जाता है। यथा समय पानी, धूप, खाद आदि उसे दिया जाता है और उसकी पूर्ण निगरानी रखनी होती है, तब वह बीज जाकर वृक्ष का रूप धारण कर लेता है। ठीक उसी प्रकार ही आत्मा भी परमात्मा पद प्राप्त कर सकती है।

हमारी आत्मा परमात्मा क्यो नही बनी उसका समाधान मुनि विद्यानन्दजी ने अपने 'अभीक्षण ज्ञानोपयोग' उपदेश मे सुन्दरता से किया है कि— आत्मा अज्ञान के अन्धकार में रही है। उसे ज्ञान का आलोक मिला ही नही। अज्ञान का आवरण रहते मनुष्य किसी भी तत्त्व को जानेगा कैसे ?

अज्ञान अन्धकार मे चलने वाले को कूप, वापी, तडाग दिखेंगे कैसे ? विष धर नाग पर उसका पाव भी रखा जा सकता है। उसे पथ न सूझने के कारण वह पथभ्रष्ट भी हो सकता है।

उसके विपरीत जिसके पास ज्ञान का दीपक है वह सुख पूर्वक पथवर्ती कील कण्टको से अपनी सुरक्षा करते हुए अपने मन्तव्य-ध्रुव को सहज ही प्राप्त कर लेता है।

अज्ञानता से ही मनुष्य सासारिक साधनो मे उलझ जाता है। वह उन्हे ही स्व का मानकर मोह के वधन मे जकड जाता है। जवकि सासारिक प्रसाधन आत्मा से भिन्न है।

मुनि श्री विद्यानन्दजी ने आगे कहा है कि ज्ञान की पिपासा कभी शात नही होती। ज्ञान प्रतिक्षण नूतन है। वह कभी जीर्ण या पुराना नही पडता है। स्वाध्याय, चिन्तन, तप, सयम, ब्रह्मचर्य आदि कषाओ से ज्ञान विधी को प्राप्त किया जा सकना है।

सासारिक विषय-वासना रूप झझटो से यह सासारिक आत्मा सहज ही छुटकारा नही पा सकती है। उसे इस प्रकार के अवसर चाहिये ताकि सासारिक कार्यों के मध्य कभी सासारिक क्षण भगुरता का बोध भी हो सके, उसे किन्ही महान आत्माओ की स्मृति होती रहे और वह अपना साधनापथ सरल वना सके।
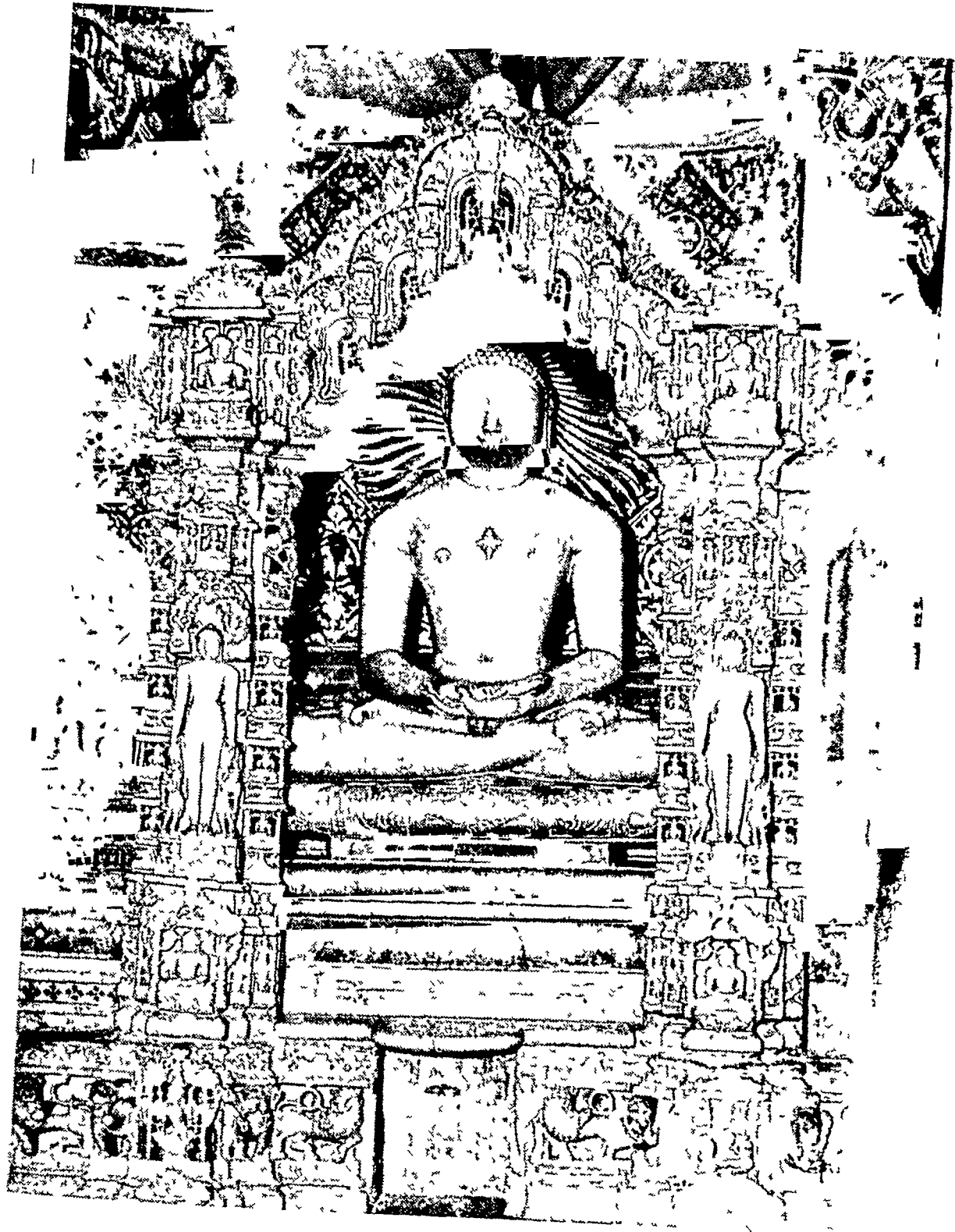
शांतिनाथ भगवान की भव्य मूर्ति लाडनूं
जैन चित्रालय से साभार

जैन धर्म अति-प्राचीन है

० पं सम्पतकुमार मिश्र, सीकर

कुछ लोगो का यह कथन कि 'जैन धर्म आधुनिक है' कोई ठोस आधार नही रखता। हिन्दू-शास्त्रो मे जिन ग्रन्थो को अति प्राचीन होने के कारण 'पुराण' शब्द से अभिहित किया जाता है वे १६ पुराण है। उनमे भी जिस श्रीमद्भागवत पुराण को प्रधान पुराण मानकर 'पुराण तिलक' की विशिष्ट उपमा से अलकृत किया गया है, उस श्रीमद्भागवत के पचम स्कन्ध के पचम और षष्ठ, अध्यायो मे जैन धर्म के प्रथम अवतार जिन्हे हम अष्टम मानते है, भगवान ऋषभदेव का उज्ज्वल चरित्र चित्रित है, इतना ही नही, जैन आगमो मे जो शब्द त्यागी तपस्वी महात्माओ के सम्बोधन मे प्रयुक्त हुए है, वे 'श्रमण' 'श्रावक' दिगम्बर आदि शब्द भी अनेक स्थलो मे मिलते है। जैसे जैन शास्त्रो मे वैसे ही श्रीमद्भागवत मे 'अहिंसा परमो-धर्म' का उद्घोष अनेक स्थानो पर हुआ है।

जैन समाज मे जिस अर्हत शब्द का प्रयोग होता है, वह भी पचम स्कन्ध मे प्रयुक्त हुआ है। एतावता यह बात सूर्य के प्रकाश की तरह स्पष्ट हो जाती है कि जैन धर्म आधुनिक अथवा नवीन नही, अति प्राचीन है, और सदातन-सनातन है।

द्वापर युग मे जैन धर्म के सिद्धान्तो का व्यवहार मे होना पाया जाता है। वह भी किसी साधारण मानव के शब्दो मे नही, अपितु यशोदा-नन्दन श्रीकृष्ण के शब्दो मे प्रकट हुआ है। दशम स्कन्ध के २४वे अध्याय मे इन्द्रयाग भग प्रकरण मे भगवान श्रीकृष्ण अपने पिता श्री नन्दराम जी से कहते है कि —

> कर्मणा जायते जन्तुः कर्मणैव विलीयते।
> सुख दु.ख भयं क्षेम कर्मणैवाभिपद्यते ।।
> अस्ति चेदीश्वरः कश्चित् फलरूप्यन्य कर्मणाम्
> कर्तार भजते सोऽपि न ह्यकर्तु. प्रभुर्हि स

इस श्लोक मे 'अस्तिचेत्' शब्द का अभिप्राय 'स्याद्वाद' से स्पष्ट है श्रीमद्भगवद गीता मे भी 'कर्मणैव स सिद्धि आस्थिताः जनकादय.' इस

श्लोकार्थ से कर्म की प्रधानता निर्विवाद है जो जैन आम्नाय द्वारा समर्थित है ।

इतना ही क्यो, भारतवर्ष मे जितने भी धर्म प्रचलित है, उनमे जैन धर्म को भी सदा से सम्मान-पूर्ण समान स्थान दिया हुआ है । भगवान की स्तुति का एक श्लोक सदा से व्यवहृत और प्रसिद्ध है, जो महात्मा गाधी की प्रार्थना-परम्परा मे भी अन्यतम अ ग था । उस श्लोक मे प्राचीन भारत मे प्रचलित वैष्णव, शैव, वेदान्ती मीमासक, नैयायिक जैन आदि सबका उल्लेख समान-स्तर पर हुआ है । इससे यह सिद्ध है कि भारत-वर्ष मे जैन धर्म सदा से सम्मानास्पद रहा और उसके त्याग-तपस्या से पावन सन्त भी सबके लिए अभिवन्दनीय रहे । उक्त श्लोक इस प्रकार है—

य शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिन
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण-पटवः कर्तेति नैयायिका
अर्हन् इत्यथ जैन शासन रता- कर्मेति मीमासका
सोऽय वो विदधातु वाछित फल त्रैलोक्यनाथो हरि

इन सब प्रमाणो के अतिरिक्त जैन धर्म मे दीक्षित मुनियो ने धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह, सदसद् विवेक, विद्या सत्य और अक्रोध—इन दश विध धर्मो को आचरण मे लेकर जो आध्यात्मिक उद्‌बोधन जन-समाज को दिया है, वह अन्यत्र प्रायः दुर्लभ है । मनुस्मृति के साधारण १० धर्म, जिन्हे जैन-समाज दश लक्षण कहता है, जन साधारण मे भले ही सक्रिय न बन सके हो, किन्तु जैन मुनियो मे तो उपर्युक्त १० धर्म साकार भाव पाये हुए प्रतीत होते हैं । अतः जैन धर्म और उसके अनुयायी मुनि सब के लिए अभिवन्दनीय और अभिनन्दनीय है और निःसन्देह जैन धर्म भारतवर्ष का अति प्राचीन धर्म है, आधुनिक नही ।
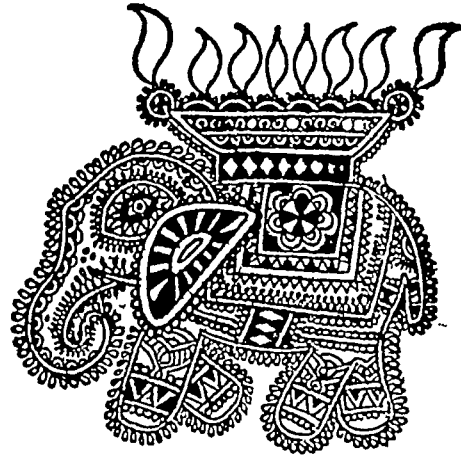
धार्मिक सहिष्णुता

० लक्ष्मीचन्द्र 'सरोज' एम. ए.

प्रातःकाल होते ही मन्दिर मे घटे बजते है। लोग धर्म-स्थानो की ओर बढते हैं। सन्ध्या के समय आरती होती है, कीर्तन होता है। रात्रि को रामायण का पारायण होता है, किसी विद्वान साधु या विद्वान के सान्धिय में सत्सग होता है, तब लगता है कि हम धार्मिक बन गये और हमारा जीवन धर्ममय हो गया पर मन्दिर या धर्म-सभा से बाहर निकलते ही जब हम पुनः उन ही बुरी वृत्तियो को स्वीकार कर लेते है, जिनको छोडने के लिये देवता के मन्दिर मे गये थे अथवा सत्सग मे सम्मिलित हुये थे, तो कहना होगा कि हमारा मन्दिर जाना या सत्सग मे भाग लेना निष्फल ही हुआ।
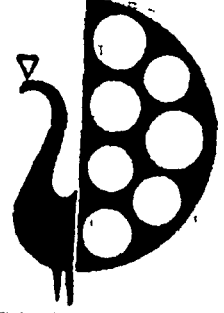
इससे भी आगे बढकर अपनी अबुद्धिमत्ता का परिचय हम उस समय देते है, जब अल्लाहो अकबर या सत्ता श्री अकाल अथवा हर हर महादेव का नारा सुन कर बिना आगा-पीछा विचारे ही विरोधियो को लडने को ललकारते है और धर्मान्ध बन कर मेरा धर्म बडा है अन्य का धर्म छोटा है, मेरा धर्म सच्चा है, दूसरे का धर्म झूठा है, कहते हैं। इस प्रकार का अधर्म काम करते हुये देखकर अन्य लोग न केवल हम से बल्कि हमारे धर्म से भी घृणा करने लगते है और कभी-कभी तो वे खुल्लमखुल्ला हमारे मुख पर भी कहने लगते है कि ऐसे धर्मात्माओ से तो हम अधर्मात्मा ही अच्छे है, जो मनुष्य को मनुष्य तो मानते है और मनुष्य के साथ मनुष्य जैसा व्यवहार तो करते हैं।

परिभाषा

धार्मिक शब्द धर्म से बना है और धर्म शब्द 'धृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ धारण करना है। हा तो जो धर्म को जानता है वह धर्मविद है और जो धर्म को धारण करता है वह धर्मात्मा या धार्मिक है। अच्छा सच्चा धर्मात्मा अपने देव, शास्त्र, गुरु और धर्म पर अखण्ड आस्था रखता है। धर्म के सिद्धान्तो का वह दैनिक जीवन मे यो प्रयोग

करता है कि उसकी दिन-चर्या व व्यवहार को देख कर, उसके कृतित्व से आकर्षित होकर अन्य लोग स्वय ही उसे अपना आदर्श बना लेते हैं और उस जैसे शिष्टाचारी व्रताचारी आत्मनिग्रही जितेन्द्रिय बन जाना चाहते है तब उसके धर्म-प्रचार की इच्छा उसका धर्म-प्रसार विषयक ज्ञान, उसकी धर्म-प्रभावना विषय की क्रिया पूर्ण होती है। ऐसा धार्मिक धर्म-भूषण होता है, जीवित धर्म-मूर्ति होता है, उसके वचन पत्थर की लकीर होते है, उसके आशीर्वाद तत्काल फलित होते है।

सहिष्णुता से आशय सहनशीलता का है। धर्म का पिता धैर्य है और माता क्षमा है तथा शाति गृहिणी है। ऐसे धर्म को धारण करने वाला न तो अज्ञानी होगा और न असयमी तथा न असहिष्णु पर यदि कोई अपने धर्म की जय और अन्य के धर्म की क्षय की बात विचारता है तो वह न धर्मात्मा है और न सहिष्णु। यदि कोई अपने वर्ग की विजय और अन्य के वर्ग की पराजय चाहता है तो वह अनुदार और असहिष्णु तथा अदूरदर्शी एव अधार्मिक ही है। कारण, धार्मिकता और सहिष्णुता का तो चोलीदामन जैसा सम्बन्ध है, जहा धार्मिकता है वहा सहिष्णुता का अनुबन्ध है।

'मजहब नही सिखाता आपस मे वैर रखना'। यदि हम उर्दू के सुप्रसिद्ध शायर डा० इकबाल के पूर्वोक्त कथन से सहमत हैं तो कोई कारण नही कि हम मुसलमान होकर हिन्दुओ से लडे या हिन्दू होकर मुसलमानो से लडे। यदि धर्मान्धता की इति श्री हो जावे तो हिन्दू-मुस्लिम दगो के, जैन और बौद्ध विरोधो के दूर होने मे अणु भर भी समय नही लगे पर अध्ययन और अनुभव साक्षी है कि आदमी ने धर्मान्ध बन कर धर्म के नाम पर वह किया जो अधर्म भी न होकर अमानुषिक ही था और तो और धर्मान्ध बनकर आदमी ने अपने ही सहधर्मियो को भी आडे हाथो लिया, इससे बढकर और क्या विडम्बना होगी ?

परिमाण

महात्मा गाधी के शब्दो मे जब हम स्वीकार करते है कि धर्म एक जीवन-पद्धति है, इसकी सिद्धि केवल सत्य और प्रेम द्वारा ही की जा सकती है और जब इसकी सिद्धि हो जाती है तब ससार मे शाति और सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा हो जाती है पर आज सभी क्षेत्रो मे जो एक अलगाव, एक कुण्ठा, एक सत्रास, एक विरोध, एक भ्रष्टाचार, एक दलबन्दी, एक असहनशीलता का वातावरण देश और समाज मे व्याप्त है, उससे लगता है कि अभी हम धार्मिक नही और चाहे जो हो। गाधी जी के शब्दो मे हम विचार ही नही पाते हैं कि ईसाई को हिन्दू और हिन्दू को ईसाई बनाने का प्रयत्न करने की क्या आवश्यकता है। यदि हिन्दू अच्छा और ईश्वर प्रिय व्यक्ति है तो यह बात ईसाई के लिये सन्तुष्टि का विषय क्यो नही होना चाहिये ? पर इतनी क्षमता अभी तक हम मे नही आ पाई है। परम्परागत धर्म को किसी रूप मे जीवित रखना एक बात है और धर्म को युगानुसारी बनाते हुये उसका दैनिक जीवन मे आचरण करना दूसरी बात है।

जब हम जानते हैं कि धर्म, नैतिकता का मूल है और वह व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित है तथा मनुष्य के अन्तर्जगत और बहिर्जगत से भी उसका घनिष्ठ सम्बन्ध है तब फिर हम क्यो न धार्मिक सहिष्णुता को अपनावें ? यदि हम धार्मिक सहिष्णु नही बनते है, विचारो मे उदार नही बनते है, हृदय मे आकाश सी विराटता नही लाते हैं, कार्य-कलाप मे समुद्र सी गम्भीरता का समावेश नही करते हैं तो हमारा धर्म-कर्म ढोग है, छल है, आडम्बर है, इससे हम अपने व अन्य जनो के लिये छल भले लें पर धर्म का मर्म नही जान पावेंगे और न सही अर्थों मे धर्मविद या धर्मात्मा ही कहला पावेंगे। इसलिये धार्मिक सहिष्णुता की सम्यक्रीत्या आराधन के लिये आवश्यक है कि हम भेद से अभेद की

'ओर चलें, द्वैत से अद्वैत की ओर चलें, विरोध के स्थान मे समन्वय को महत्व दे ।

गाधी जी के मान्य गुरु और एक से अधिक धर्म-ग्रन्थो के लेखक, गुजराती वाङमय के कवि रायचन्द भाई से प्रस्तुत प्रसग मे परामर्श चाहे तो वे भी धार्मिक सहिष्णुता की दिशा मे निस्सकोच होकर कहेगे—

भिन्न भिन्न मत देखिये, भेद दृष्टि नो एह ।
एक तत्व ना मूल मा, मानो व्याप्या तेह ।।

यानी संसार मे जितने भी मत है वे भेद दृष्टि लिये है पर इतने पर भी उनके भीतर एक मूल तत्व समाया है और वह धर्म का है, जीवनदायी अमृत का है, आत्म तत्व है, अपने व अन्य के अस्तित्व की स्वीकृति का है ।

परिणाम

चू कि धर्म मनुष्य को मनुष्य से जोडने वाली कडी है । वह सत्य, प्रेम और करुणा पर निर्भर है, अतएव हमे तन-मन-धन देकर भी अपनी धार्मिक सहिष्णुता की रक्षा करनी चाहिये । मेरा ही धर्म सच्चा है, इसके स्थान पर यह कहना चाहिये कि जो सच्चा धर्म है, वह मेरा है । विचार के इस बिन्दु से हम सही अर्थो मे धर्मान्ध के स्थान मे धार्मिक सहिष्णु बनेंगे और मनु की सन्तान होकर मन और मति वाले मननशील मनुष्य होकर सबके सम्मुख सिंह-गर्जना कर कह सकेंगे—

पक्षपातो न मे वीरे न द्वेष कपिलादिषु ।
युक्ति मद् वचन यस्य तस्य कार्य परिग्रहः।।

अर्थात् महावीर के प्रति मेरा कोई पक्षपात नही है और कपिल आदि मुनियो से द्वेष नही है, जिसका धर्म–वचन युक्तिसगत है, वही मुझे काम्य है । यह अनुबन्ध, यह अनाग्रह, यह अनाक्रमण, यह अनुकरण आज के युग मे काम्य है ।

सभी प्राणियो को सुख-पूर्वक जीने की शिक्षा देने वाले धर्म ने मानव जाति पर दुखो के पहाड ढाये । मानव मानव को समान समझ कर भी, आत्मवत् सर्वभूतेषु का व्यवहार करने की सीख देने वाले धर्म ने मानव मे भेद की दीवारे खडी कर दी । यह हम सभी के जीवन का युगयुगो का अनुभूत सत्य जैसे भी असत्य या समाप्त हो वैसा प्रयत्न हम सभी को प्राण-प्रण से करना चाहिये ।

धार्मिक सहिष्णुता के लिये आवश्यक है कि

(१) अपने धर्म के प्रति आस्था हो पर एकान्तनिष्ठा न हो ।

(२) अपने धर्म की प्रशसा और अन्य के धर्म की निन्दा न हो ।

(३) परम्परा का गौरव हो पर पूर्वाग्रह के कारण नवीन विचार को तिलाजलि न हो ।

(४) धर्म के मर्म को केवल आज्ञा द्वारा नही बल्कि परीक्षा द्वारा भी सीखा जावे ।

(५) युग के असतोष की आग को अहिंसा के अमृत द्वारा शीतल किया जावे ।

(६) दैनिक जीवन मे तन, मन, वचन पर संयम या अकुश हो ।

(७) नियम के निर्वाह मे निर्णय विवेकपूर्ण हो ।

(८) सभी धर्मो मे श्रेष्ठता के अश है । उन्हे स्वीकार किया जावे ।

(९) अशोक बनने के लिये हम सभी बहुश्रुत अभ्यासी हो, दूरदर्शी चिन्तक हो ।

(१०) गाधी जी के सर्व धर्म समानत्व के पूर्णतया विश्वासी हो ।

(११) धर्म की अत्यधिक भक्ति मे हम धर्म-तरु के लिये बढई बनने से बचे ।

आज इतना ही मुझे धार्मिक सहिष्णुता निबन्ध मे निवेदन करना है ।

अहिंसा मानव मुक्ति का अमोघ अस्त्र

○ सुरेश कुमार रारा, सीकर (राज०)

अहिंसा जीवन का शाश्वत तत्व है। साक्षात ब्रह्म है। मानव जीवन तक ही वह सीमित नही, प्रत्युत प्रत्येक जीवन उस प्रेम मय अहिंसा पर ही आधारित है, क्योकि जीव मात्र के अन्तर मे परमात्मा का वास है। अहिंसा ही परमात्मा है। स्वामी समन्तभद्राचार्य ने इस शाश्वत तत्व की घोषणा हजारो वर्ष पहले निम्न शब्दो मे की थी

'अहिंसा भूताना जगति विदित ब्रह्म परम।'

लोक के प्रत्येक धर्म ग्रन्थ में अहिंसा की प्राण प्रतिष्ठा की हुई मिलती है वेद ने यही कहा है और इजील ने भी।

अहिंसा केवल कमजोरो के लिये ही एक अमोघ अस्त्र नही है बल्कि वह स्वत एक महान शक्ति है। जिसका वैज्ञानिक विश्लेषण और वर्णन जैन तीर्थ करो ने किया था।

स्व. डा० कामताप्रसाद जैन ने भी यही कहा है कि आज के युग मे उनके अहिसा, अनेकात और अपरिग्रह आदि सिद्धान्तो की बडी आवश्यकता है इनके प्रचार से ही विश्व मे शाति और सुख की स्थापना हो सकती है। जर्मन के महाकवि गेटे ने भी इसी के गीत गाये और इगलैण्ड के राष्ट्र कवि शेक्सपीयर ने सैकडो वर्ष पहिले दया को ब्रह्म का रूप कहा।

"But mercy is above this Sceptered sway. It is an attribute to god him self"

"That man is king who knows that love is god"

महिला कवि एल्ला व्हीलर विल्कौक्स ने उस मानव को नरेश घोषित किया है जो प्रेम मे प्रभु के दर्शन करता है।

भारत मे महात्मा गाधी ने अहिंसा की अमोघ शक्ति का प्रत्यक्ष अनुभव कराया था जिससे यह स्पष्ट हो गया कि लोक-कल्याण के लिये अहिंसा ही एक मात्र विकल्प है निस्सदेह अहिंसा ही मानव शान्ति का अमोघ अस्त्र है। वह अद्भुत शक्ति है जिसके समक्ष भय, आशका, अशान्ति, कलह, घृणा

आदि भाव पल भर के लिये भी नही ठहर सकते अत अहिंसा वहा है जहा राग द्वेष नही है—अप्रादुर्भाव खुलरागादीना भवेतहिसा। मानव राग द्वेष को जीते और आत्मविजय का ध्वज फहरा दे अत अहिंसा नर से नारायण बनने का शाश्वत मत्र है।

भगवान महावीर अपने उपदेशो मे कहते थे कि अपरिग्रह मे अहिंसा का सम्बन्ध चोलीदामन की तरह है अहिंसा का बडा शस्त्र अपरिग्रह ही है। अपरिग्रह के लिये महाव्रत और अनुव्रत है परिग्रह की गाठ मन को निर्मम बनाती है। इसलिये मै कहूँगा की लोग पेट भरे परन्तु पेटी न भरे क्योकि पेटी तब तक नही भर सकती जब तक लाखो के पेट खाली न होगे। अहिसा ही हमे साथ २ अपरिग्रह का पाठ पढाती है इतिहास की परम्परा भी मानव को अहिंसा का आराधक आदिकाल से प्रमाणित करती है। आदिकाल का मानव भी निस्सदेह अहिसक था यह इस प्रमाण से प्रगट होता है कि उसकी आत और दात मासभक्षी जीवो से भिन्न है। तथा बेबीलोनिया का एक पाषाणपट (Tablet) ई० पूर्व ३६०० का मिला है जिस पर लिखा है कि आदिकाल का मानव शाकभाजी खाता था और झरनो का पानी पीकर पशुओ के साथ प्रेम से रहता था आधुनिक इतिहासवेत्ता अनुमान से कह देते है कि मानव का पूर्वज शिकारी था, किन्तु यह कथन निराधार है—असत्य है।

मोहनजोदडो की सभ्यता अहिंसा की सभ्यता मानी जाती है। इसके अनुसार ऋषभदेव जैन धर्म के प्रथम तीर्थकर थे जिन्होने देशवासियो को कला-कौशल का पाठ पढाया था। इसलिए हमे आज अहिंसा की पुन प्राण प्रतिष्ठा करनी होगी। क्योकि मानव का भविष्य अहिसा के हाथो मे ही सुरक्षित है।

जैन धर्म की ऐतिहासिक प्राचीनता

० महेन्द्र सोनी

जैन धर्म की ऐतिहासिक प्राचीनता के विषय मे यदि कोई बात कही जा सकती है तो वह होगी कि जितनी ही ऐतिहासिकता भारतवर्ष के ऐतिहासिक काल की सिद्ध होती जायेगी उतनी ही जैन धर्म की प्राचीनता प्रकट होगी। कारण की भारत के प्राचीनतम काल मे भी जैन धर्म के अस्तित्व की प्रधानता रही है।

जैन एव जैनेतर साहित्य से यह स्पष्ट है कि भगवान ऋषभदेव ही जैन धर्म के प्रवर्तक थे। प्राचीन शिलालेखो से भी यह तथ्य प्रमाणित होता कि ऋषभदेव जैन धर्म के प्रथम तीर्थ कर थे और भगवान महावीर के समय मे भी ऋषभदेव की मूर्तियो की पूजा जैन लोग करते थे।

श्री विसेण्ट-ए-स्मिथ का कहना है कि "मथुरा से प्राप्त सामग्री लिखित जैन परम्परा के समर्थन मे विस्तृत प्रकाश डालती है, और जैन धर्म की प्राचीनता के विषय मे अकाट्य प्रमाण उपस्थित करती है। तथा यह बतलाती है कि प्राचीन समय मे भी वह अपने इसी रूप मे मौजूद था।

मेजर जनरल जे सी. आर. फर्लाग महोदय अपनी "दि शार्ट स्टडी इन साइन्स आफ कम्परेटिव रिलिजियन" नामक पुस्तक मे लिखते हैं—

ईसा मे अगणित वर्ष पहले जैन धर्म भारत मे फैला हुआ था। आर्य लोग जब मध्य–भारत मे आये तब यहा जैन लोग मौजूद थे।

जैकोली, इन्साईक्लोपेडिया आफ रिलीजन एण्ड ईथिक्स मे लिखा है कि प्राचीनतम पुद्गालिक सिद्धान्त का श्रेय एक मात्र जैनो को है।

जब जैन धर्म का अस्तित्व वेदो मे भी मिलता है, तब उसे बौद्धकालीन या बोद्ध धर्म से निकला हुआ समझना नितान्त मिथ्या है।

भगवान ऋषभदेव और उनके पुत्र चक्रवती भरत का विस्तृत वर्णन वेदो, महाभारत तथा जैनतर पुराणो से मिलता है। जिससे जैन धर्म की प्राचीनता सहज ही आकी जा सकती है।

इसी प्रकार बद्रीनाथ–धाम जो अति प्राचीन क्षेत्र माना गया है। उसके भी सभी कारण जैन तीर्थ कर ऋषभदेव से सम्बन्ध रखते है। जैसा कि श्री दि. मुनि विद्यानन्द जी ने सन् १६७१ मे जाकर सिद्ध किया।

राजा जनक (सीता के पिता) स्वय जैन थे और रामचन्द्र जी भी जैन धर्म को मानते थे। अहिंसा को हृदय मे रखते हुए न वे मास खाते थे, और ना ही शहद का सेवन करते थे।

ईकीसवे तीर्थ कर भगवान नेमीनाथ तो वसुदेव–पुत्र कृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता थे। महाभारत मे कई स्थान पर 'अरिष्टनेमि' नेमीनाथ तीर्थ कर का नाम आया है।

भगवान नेमिनाथ भी भगवान ऋषभदेव की तरह सब परिधान त्यागकर दिगम्बर हो आत्मध्यान मे लीन हो गये और केवल ज्ञान को प्राप्त करके गिरनार से निर्वाण प्राप्त किया—जैसा महाभारत मे लिखा है।

इसके अतिरिक्त ऐलोरा, अजन्ता, खण्डगिरि, पपोरा, मूडबद्री आदि ऐसे स्थान है जहा जैनत्व की अति प्राचीनता मु ह बोल रही है।

बौद्ध शास्त्रो मे भी जैनियो का उल्लेख निगण्ठ (निर्ग्रंथ) रूप मे बार-बार हुआ है। कई जगह अन्य तीर्थ करो के वर्णन के साथ नग्न मुनियो का भी कथन आया है। अत सिद्ध होता है कि जैन धर्म, बौद्ध धर्म से पूर्व था ही।

"हिंसया दूयते चित्त तेन हिन्दुरितीरितः ।।

अर्थात्—हिसा से जिसका हृदय दु.खी होता है उसे ही 'हिन्दु' इस नाम से पुकारा है।

—वेद

महावीर निर्वाण के पहिले और पीछे

० डॉ कस्तूरचंद कासलीवाल एम ए, पी-एच डी शास्त्री

भगवान महावीर के निर्वाण को २५०० वर्ष होने वाले है। निर्वाण के समय महावीर पावा की भूमि को पावन कर रहे थे। उस दिन कार्तिक कृष्णा अमावस्या थी। महावीर स्वामी ने अमावस्या की प्रभात वेला मे महा निर्वाण प्राप्त किया। जगत के आवागमन के दुष्चक्र से सदा के लिये मुक्ति प्राप्त की। अष्ट कर्मों से छुटकारा मिल गया तथा मानव जीवन की श्रेष्ठतम सफलता ने उनके चरण चूम लिए। मुक्ति लक्ष्मी ने उनका हार्दिक स्वागत किया। भगवान महावीर ने निर्वाण के पूर्व ३२ वर्ष तक देश के विभिन्न स्थानो मे विहार करके जगत् के सतप्त प्राणियो को सुख एव शान्ति का मार्ग वतलाया तथा वर्गभेद जाति-भेद एव धर्मो के नाम पर होने वाले अत्याचारो को जड से उखाडने का प्रयास किया। इस दिशा मे तीर्थ कर महावीर को अपार सफलता मिली और देश मे अहिसा की जड इतनी गहरी जमी कि फिर वह अनेक झझावतो एव तूफानो से डटकर टक्कर ले सकी और आज भी सुमेरु की तरह अडिग खडी है।

कैवल्य होने के पश्चात् भगवान महावीर ने अपनी सम्पूर्ण देशना केवल अर्धमागधी भाषा मे दी जो उस समय की जन भाषा थी। भगवान पार्श्वनाथ के पश्चात् यह प्रथम अवसर था जब किसी धर्माचार्य ने जन सामान्य की भाषा मे उपदेश दिया हो इसलिए उनकी धर्मसभाओ मे सख्यातीत स्त्री पुरुष उपस्थित होते थे। उन्होने सर्वप्रथम हिसा के विरुद्ध जिहाद बोला और यज्ञो मे दी जाने वाली नरबलि एव पशुबलि को घोर पाप बतलाया। सब जीवो से निरन्तर मैत्री भाव रखने का उपदेश दिया। महावीर ने जातिवाद के विरुद्ध जनक्रान्ति की और धर्म को किसी की बपौती बनाने का विरोध किया। इसलिये "कम्मुणा बभणो होइ कम्मुणा होइ सुद्दओ, वयसो कम्मुणा होइ कम्मुणा होइ खत्तिओ।" जैसे महामत्र का सब स्थानो मे

जाकर प्रचार किया। उन्होने जीव मात्र को गले लगाने पर जोर किया तथा सम्यकदर्शन, सम्यक्ज्ञान एव सम्यक्चारित्र रूप रत्नत्रय को जीवन मे उतारने पर बल दिया।

निर्वाण प्राप्ति के पूर्व तक सारा देश उनका हो चुका था और उनकी अमृतवाणी सुनने को आतुर था। वे जहा भी विहार करते उनका समवसरण रचा जाता और उसमे उनकी धर्मसभा लगती। उनकी धर्मसभा मे प्राणिमात्र क प्रवेश का अधिकार था। सारा मानव समाज एक ही स्थान पर बैठता फिर चाहे वह राजा हो या प्रजा। ऊच हो अथवा नीच। धनी हो अथवा निर्धन। स्पृश्य और अस्पृश्य जैसी वहा कोई चीज नही थी। जैन पुराणो मे यमपाल चाण्डाल को भी उसके सच्चरित्रता के कारण आदरणीय स्थान मिला हुआ है। महावीर तीर्थ कर थे। सर्वज्ञ थे तथा विश्व कल्याण की भावना से ओत-प्रोत थे। इसलिये जिस देश मे भी उनका विहार होता वहा कभी अकाल नही पडता। जनता सुखचैन की श्वास लेती तथा महामारी, रोग, सताप सभी मिट जाते। वास्तव मे वे अपने समय के सर्वाधिक श्रद्धास्पद धार्मिक महापुरुष थे।

भगवान महावीर का निर्वाण ईसा के ५२७वर्ष पूर्व हुआ। उस समय उनकी आयु ७२ वर्ष की थी। महावीर के पश्चात् गौतम गणधर श्रमण सघ के प्रमुख बने। गौतम जन्म से ब्राह्मण थे और वेदो के महान् ज्ञाता थे लेकिन उन्होने भगवान महावीर का प्रथम एव प्रमुख शिष्य होने का गौरव प्राप्त किया। इसके पश्चात् आचार्यो की लम्बी परम्परा चलती रही जिन्होने महावीर के धर्म को भारतीय जीवन का अभिन्न धर्म बना दिया। यहा अनेक धर्म बने और समाप्त भी हो गये और यहा तक देश का सर्वाधिक सख्या वाला बौद्ध धर्म भी भारत से समाप्त हो गया लेकिन जैन धर्म को आज भी देश मे गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। महावीर के प्रमुख सिद्धान्तो—अहिंसा, अनेकान्त एव अपरिग्रहवाद का प्रचार बढता गया और कुछ ही वर्षो मे महावीर का धर्म पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण भारत तक फैल गया। दक्षिण भारत मे जैन धर्म के प्रचार प्रसार मे आचार्य भद्रबाहु एव उनके शिष्य सम्राट चन्द्रगुप्त का प्रमुख योगदान रहा। महावीर निर्वाण के पश्चात् सम्राट सम्प्रति, खारवेल जैसे तेजस्वी सम्राट गुप्त जिन्होने देश मे अहिंसा एव महावीर के सिद्धान्तो का खूब प्रचार किया। दक्षिण भारत मे राष्ट्रकूट जैसे राज्यो ने जैन धर्म के विकास मे योग दिया। महावीर के धर्म का प्रभाव भारत मे हीनही किन्तु पडौसी राज्यो मे भी फैल गया और वहा भी अहिंसा व्यक्ति २ का धर्म बन गया।

महावीर के अनुयायी शासको एव जन सामान्य ने देश मे एक भी ऐसा उदाहरण प्रस्तुत नही किया जिससे देश के गौरव, अखण्डता एव राष्ट्रीय भावना मे अन्तर आता हो। देश पर विपत्ती आने पर देश पहिले और धर्म पीछे रहा और यही कारण है कि महावीर का धर्म भारत की जनता का धर्म बन गया और अलगाव का प्रश्न कभी सामने नही आया। धर्म के नाम पर कभी झगडा नही हुआ और महावीर के सिद्धान्तो मे सभी वर्ग का विश्वास जमा रहा।

जैनाचार्य देश के एक कोने से दूसरे कोने तक विहार करते थे। उन्होने विशाल साहित्य का सर्जन किया और देश की सभी भाषाओ को अपनी विशाल एव महत्वपूर्ण कृतियो से समलकृत किया। उन्होने स्थान स्थान पर ग्रथागार स्थापित किये जिनके माध्यम से लाखो ग्रथो को नष्ट होने से बचाया जा सका। देश के विभिन्न जैन ग्रथागारो मे आज भी ७–८ लाख से अधिक पाण्डुलिपिया सुरक्षित है जो सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश, हिन्दी एव राजस्थानी के अतिरिक्त तमिल, तेलगू, कन्नड गुजराती एव मराठी भाषा मे निबद्ध है। इन आचार्यों ने धार्मिक, आध्यात्मिक एव लौकिक

विषयो मे अपने समस्त ज्ञान को उडेल दिया। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान डा० विन्टरनिट्ज के शब्दो मे ऐसा कोई भी विषय नही बचा है जिसमे जैनाचार्यो ने अपनी लेखनी नही चलाई हो। जैन ग्रथागारो मे जैन ही नही जेनेतर आचार्यों की कृतियाँ उसी श्रद्धा एव आदर के साथ सग्रहीत की गयी है तथा कुछ कृतिया तो अब भी ऐसी है जो केवल जैन ग्रथागारो मे ही उपलब्ध हुई है।

साहित्य निर्माण के साथ ही मन्दिरो, चेत्यालयो एव विशाल कलापूर्ण मूर्तियो के निर्माण की होड सी लग गयी और जैन समाज नेअपनी असीम श्रद्धा एव भक्तिवश देश के प्राय सभी प्रमुख नगरो एव गावो मे मन्दिरो की पक्ति की पक्ति खडी कर दी। राजस्थान मे ही देलवाडा, रणकपुर, सागानेर के जैन मन्दिर कला के उत्कृष्ट नमूने है इसी तरह केशोरायपाटन, चादखेडी, झालरापाटन, जयपुर, आमेर आवा के मन्दिरो मे स्थापित विभिन्न तीर्थ-करो की मूर्तिया कला की दृष्टि से विश्व मे अपना प्रमुख स्थान रखती है।

महावीर महान वीतरागी निग्रंथ श्रमण थे लेकिन उनके परिनिर्वाण के करीब ३०० वर्ष पश्चात् महान सघ भेद का उद्भव हुआ जिसने जैन सघ को दिगम्बर और श्वेताम्बर सघ मे विभाजित कर दिया। लेकिन इसमे भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, अनेकात, सत्य, अचौर्य ब्रह्मचर्य एव परिग्रह परिणाम व्रतो के परिपालन मे कोई अन्तर नही आया और दोनो ही मान्यताओ ने देश को विभिन्न उपायो से आगे बढने मे सहयोग दिया। अधिकाश जैन धर्मानुयायी कृषि, वाणिज्य, उद्योग एव राज्य सेवा पर निर्भर है। वे देश के विभिन्न क्षेत्रो मे फैले हुए है। और अल्प सख्या मे होते हुए भी देश की सर्वाधिक विकसित समाज मे माने जाते हैं।

भगवान महावीर का२५००वा निर्वाण शताब्दि महोत्सव आगामी वर्ष सारे देश मे मनाया जाने वाला है और उस समय प्रत्येक भारतीय को उनके चरणो मे सादर श्रद्धाञ्जलि समर्पित करने का गौरव प्राप्त होगा।

शीलवन्तो गता स्वर्गे नीच जाति भवा अपि।
कुलीनाः नरक प्राप्ता शीलसयमनाशिनः॥

अर्थ—नीच जाति मे जन्म लेने पर भी शीलवान् व्यक्ति स्वर्ग मे गये हैं और उच्च कुल मे जन्म लेने वाले शील सयम से रहित व्यक्ति नरक मे गये हैं।

आचार्य अमितगति

"Ahmisa is the art of living by which one can live and let others live."

—Lord Mahavira

जैन धर्म का सार

० राजकुमार जैन, सीकर

जैन धर्म मे णमोकार मत्र की वडी भारी महिमा है । यह सभी प्रकार की अभिलाषाओ को पूर्ण करने वाला, रोग, शोक, व्याधि आदि सभी बाधाओ को दूर करने वाला महामत्र है । यह समस्त मगलो मे प्रथम मगल है । किसी भी कार्य के आरम्भ मे इस मत्र का स्मरण करने से वह कार्य निर्विघ्न तथा पूर्ण हो जाता है । इस मत्र मे ५ पद, ३५ अक्षर एव ५८ मात्राए है ।

अर्थ —"णमो अरिहताण"—इस पद मे अरिहतो को नमस्कार किया गया है । अरि अर्थात् शत्रुओ का नाश करने पर अरिहन्त की सज्ञा प्राप्त होती है । मोह को अरि कहा गया है क्योकि इसी के कारण मनुष्य नरक, तिर्य च आदि मे निवास करता है ।

"णमो सिद्धाण"—इस पद मे उन सिद्धो को नमस्कार किया गया है जो कि पूर्णरूपेण अपने शरीर मे स्थित है, जिनके ज्ञानावरणी आदि अष्ठ कर्मो का नाश हो गया है और जो जन्म मरण के जाल से छूट कर अपनी आत्मा के पूर्ण स्वरूप को प्राप्त हो गये है ।

"णमो आइरियाण"—आचार्य परमेष्ठी को नमस्कार । जो सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप एव वीर्य इन पाच आचारो का स्वय आचरण करते है और दूसरे साधुओ से करवाते है, वे आचार्य कहलाते है । अर्थात् जो सम्यक् ज्ञान और चारित्र की अधिकता के कारण प्रधान पद प्राप्त कर सघ नायक बनते है तथा धर्म पिपासु जीवो को राग, द्वेष के उत्पन्न होने के कारण, उसे कम करने के लिए धर्मोपदेश करते है । जो दीक्षा लेने वालो को दीक्षा देते है एव जीवो को उनके दोषो के लिए प्रायश्चित देते है, वे आचार्य कहलाते हैं ।

"णमो उवज्झायाण"—इस पद मे उपाध्याय परमेष्ठी को नमस्कार किया गया है । परमागम के व्याख्यान करने वालो को उपाध्याय कहते हैं । ये कुछ गुणो को छोडकर आचार्य के सभी गुणो से

युक्त होते है, जिनके पास अन्य मुनिगण अध्ययन करते है, जो सूत्रक्रमानुसार जिनागम का अध्ययन करते है जो परमागम का अभ्यास करके मोक्ष मार्ग मे स्थित है, उन मुनीश्वरो को उपाध्याय कहते है।

"णमो लोए सव्व-साहूण"—इस पद मे मनुष्य लोक के समस्त रत्नत्रयधारी, पच महाव्रतो मे युक्त, दिगम्बर, वीतरागी साधु परमेष्ठी को नमस्कार किया गया है। जो आत्मा के स्वरूप की साधना करते हैं, जो सम्यक् ज्ञान, दर्शन और चारित्र के द्वारा मोक्ष मार्ग की साधना करते है, वे साधु है। जो विरक्त होकर समस्त परिग्रह का त्याग करके मुनिधर्म को स्वीकार करते है, पर पदार्थों मे ममत्व नही रखते है, वे मुनि है।

णमोकार मत्र का माहात्म्य :—

ऐसो पच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो ।
मगलाण च सव्वेसि, पढम होई मगल ।।

मगल मत्र णमोकार, जिसमे पच परमेष्ठी को नमस्कार किया गया है सभी पापो को नष्ट करने वाला है, पापी से पापी व्यक्ति भी इस महामत्र से अपने पापो को नष्ट करके पवित्र हो जाता है। यह अक्षत, चन्दन, नारियल, पूर्णकलश, स्वस्तिक आदि मगलो से प्रथम व उत्कृष्ठ मगल है। इसके स्मरण एव जप से अनेक सिद्धिया होती है, अमगल दूर हो जाते हैं और पुण्य मे वृद्धि होती है। इस मत्र के सम्बन्ध मे प्रसिद्ध है—

अनादि मूल मत्रीय, सर्व विघ्न विनाशन ।
मगलेषु च सर्वेपु, प्रथम मगल मतः।।

इस महाम्त्र के गुण अचिन्त्य है। कहा जाता है कि इसके प्रभाव से जन्म, मरण, भय, क्लेश, दु ख दारिद्र्य आदि सब भस्म हो जाते है। यह आत्मा के समस्त पापो को भस्म करने वाला, दुर्गति को रोकने वाला, विषयाशक्ति को घटाने वाला और आत्म श्रद्धा को जाग्रत करने वाला है। इस मत्र को मरते समय सुनकर भी कोई भी तिर्य च, क्रूर एव मासाहारी पशु-पक्षी भी देव स्थान के प्राप्त होते है।

जैन कथा साहित्य मे भी अनेक ऐसो कथायें आई है जिसमे इस मत्र का माहात्म्य प्रकट होता है। दयामित्र के उपदेश से णमोकार मत्र का चिन्तन कर समाधि मरण कर स्वर्ग मे देव बनना, अ जन चोर का णमोकार मत्र का जाप करके आकाश गामिनी विद्या के प्राप्त कर मुनि दीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त करना, अनन्तमती का णमोकार मत्र के प्रभाव से अपने सतीत्व की रक्षा करके देव बनना, रानी प्रभावती का इस मत्र की आराधना कर अपने शील की रक्षा करके आर्यिका दीक्षा लेकर देव गति को प्राप्त करना, कीचड मे फसी हथिनी का मनुष्य पर्याय प्राप्त करना, आदि कथाये णमोकार मत्र के माहात्म्य को सिद्ध करती है।

"जो बदला लेने की बात सोचता है वह अपने ही घाव को हरा रखता है जो अभी तक कभी का अच्छा हो गया होता।"

—बेकन

भगवान महावीर का २५०० वाँ निर्वाणोत्सव और युवक समाज

○ महेशचन्द्र जैन, जयपुर

भारतवर्ष की इस पावन धरा पर समय-समय पर महान पुरुषो ने जन्म लेकर शोषित एव पीडित समाज को एक नई राह दिखाई है । ईसा से ५६६ वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन भगवान महावीर का जन्म महाराजा सिद्धार्थ के घर हुआ । महावीर के जन्म के समय भी पुरोहितवाद का बोलबाला था । चारो ओर कर्मकाडो, यज्ञो और पशु-बलि का बाहुल्य था । हिंसा ही को लोग धर्म मान बैठे थे । ब्राह्मणो के बिना धर्म ही नही जो वे कहते सबको करना आवश्यक था । ऐसे समय मे जबकि प्रजा पीडित थी, भयभीत थी शोषित और मत-मतान्तरो मे विभक्त थी भारत-भूमि पर महावीर का जन्म सभी के लिये प्रसन्नतादायक था । देवो ने उनके जन्म समय पर प्रसन्नता के रूप मे रत्नवृष्टि की ।

त्रिशला (प्रतापी राजा चेटक वैशाली गण-राज्य के अधिपति) की बहिन के दुलारे राजकुमार महावीर को ज्ञातृवश मे उत्पन्न होने के कारण तत्कालीन भाषा मे 'नायपुते' भी कहा गया है । समय—समय पर उनके कार्यो, व्यवहारो एव उप-लब्धियो के आधार पर अनेक नामो से अभिशिक्त महावीर तत्कालीन सामाजिक परम्पराओ, रूढियो एव ब्राह्मणवाद से अत्यन्त दु खी थे । राजसी ठाठ-बाट के होते हुए भी वे वैरागी से रहने लगे और लगे एक दूसरी दिशा के चिन्तन की ओर ।

३० वर्ष की अवस्था मे गृह-त्याग वन-मार्ग को अपनाया । १२ वर्ष तक कठोर तपस्या कर जगलो मे भटकते हुए अपने कर्मों का क्षय किया । इन्द्रियो को वश मे किया और ४२ वर्ष की अवस्था मे केवल ज्ञान प्राप्त कर सच्चे सुख की प्राप्ति की । तत्पश्चात् जनता को अपने उपदेशामृत से प्लावित करते हुए, लोगो को सही राह दिखाते हुए, तत्का-लीन कुरीतियो का, ब्राह्मणवाद का घोर विरोध करते हुए ७२ वर्ष की अवस्था मे पावापुरी(विहार) मे कार्तिको अमावस्या मे मोक्ष को प्राप्त किया ।

देवो ने एव उपस्थित जन-समुदाय ने महावीर के मोक्ष की प्रसन्नता मे दीप प्रज्वलित किए और तभी से दीपावली के रूप मे यह पर्व चला आ रहा है। यह दिन भगवान महावीर के मोक्ष की हमे सदा याद दिलाता रहेगा, प्रेरित करता रहेगा कि हम भी उसी राह की ओर अग्रसर होकर हमारी आत्मा की मलिनता को दूर कर मोक्ष मार्ग की ओर कदम बढाए।

वर्तमान पीढी के लिए यह प्रसन्नता का विषय है कि भगवान महावीर का २५००वा निर्वाण दिवस ऐसे समय मे आ रहा है जबकि हम इसे अपनी आँखो से देख सकेंगे। आज भी विश्व पीडित है अनेक झझावातो मे जकडित है। चारो ओर हाहाकार है, चीत्कार है। शस्त्रो की होड, आपसी स्वार्थ, भ्रष्टाचार का बोलबाला है। मनुष्य मनुष्य का बैरी है ऐसे समय मे फिर से जागृति की आवश्यकना है। जैन-धर्मावलम्बियो का, महावीर के अनुयायियो का विशेष कर्तव्य है कि वे इस पावन पर्व पर अपनी निद्रा से जागृत हो विश्व को नई राह दिखाए एक ज्योति जलाए विश्व शाति की।

इस सब कार्य के लिए युवा वर्ग जो कि शक्तिशाली वर्ग है सबसे उपयुक्त है। युवा वर्ग को जागृत होने की परमावश्यकना है। चाहिये उन्हे दिशा निर्देश। प्रबुद्ध वर्ग को चाहिये युवा वर्ग को आगे लाकर सभी कार्य उनके माध्यम से सम्पन्न कराए। जब बुजुर्ग वर्ग का दिशा निर्देश और युवा वर्ग का जोश एव उत्साह परस्पर मिल जायेगे तो असभव से असम्भव कार्य भी सम्भव हो सकेगा।

बडे-बडे सम्मेलनो मे, विचार-गोष्ठियो मे यह मत बडे अन्दाज से व्यक्त किया जाता है कि हमारा युवा वर्ग धर्म से विमुख है उसे धर्म की ओर आना चाहिए, किन्तु देखा यह जाता है कि जब युवा वर्ग के प्रतिनिधि रूप रग-मच पर अवतरित होते है तो उन्हे एनकेनप्रकारेण हतोत्साहित कर दिया जाता है। बडे दुख की बात है आज जिनके हाथो मे सत्ता है वे नवीनता से पराङमुख ही रहना चाहते हैं।

आज की शिक्षा ने युवको की भावनाओ को नास्तिकता की ओर मोड दिया। पिछले छब्बीस वर्षो मे देश की स्वतन्त्रता के बाद धर्म के प्रति अनास्था बढने का मात्र कारण शिक्षा है, किन्तु अब फिर से युवावर्ग जागृत हो उठा है, यह समझने लगा है कि शिक्षा अपनी जगह है एव आध्यात्मिकता अपने स्थान पर है। जीवन मे धर्म भी एक आवश्यक अग है। अब आवश्यकता इस बात की है कि उन्हे सही दिशा निर्देश दिया जाय एव अपने अनुभवो से लाभान्वित कर सभी कार्यो मे उन्हे ही आगे लाया जाय।

युवको को अपना धर्म सस्कृति जीवित रखने के लिए आवश्यक है कि क्षेत्रीय आधार पर सगठित होकर प्रचलित सामाजिक कुरीतियो का दृढता से विरोध करे। समाज मे, देश मे व्याप्त भ्रष्टाचार, अनैतिकता आदि का अन्त करने को अपनी आवाज बुलन्द करें। जैन धर्म के सिद्धान्तो का व्यापक प्रसार करे। इस अर्थतन्त्र के युग मे मानवतावाद को स्थान दे। आज 'जीओ और जीने दो' के सिद्धान्त का विश्वव्यापी प्रचार आवश्यक है।

युवतिया भी समाज के लिए और देश के लिए कुरीतिया दूर करने को आगे आये हर कुरीति का दृढता से मुकाबला करे। परिवार मे एव समाज मे शान्ति का वातावरण बनाने का दिशा मे वे ही बहुत कुछ कर सकती है। अपरिग्रह का सिद्धान्त परिवार मे युवतिया ही चरितार्थ कर सकती है। इस प्रकार के सगठन निर्माण कर सकती है जिनके माध्यम मे समाज मे जागृति आए।

इस पावन पर्व भगवान के २५००वे निर्वाण दिवस पर युवको एव युवतियो को आगे आकर

ात्मक कार्यों की और प्रवृत्त होना चाहिये और
ा देना चाहिए उन लोगो को जो उनके आगे

आने के मार्ग मे रोडे बने हुए है कि वे भी बहुत
कुछ कर सकते है।

शुभमस्तु !
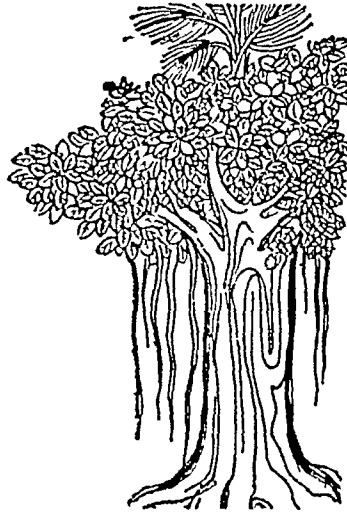
णाणुज्जोवो जोवो णाणुज्जोवस्स णत्थि पड्घादो।
दीवेइ खेतमप्प सूरोणाण जगमसेस ॥

—भगवती आराधना

ज्ञान का प्रकाश ही यथार्थ प्रकाश है क्योकि ज्ञान का प्रकाश व्यवधान रहित है। सूर्य भी ज्ञान की समता नही कर सकता क्योकि सूर्य से थोड़ा स्थान ही प्रकाशित होता है किन्तु ज्ञान से सम्पूर्ण विश्व ही प्रकाशित हो उठता है।

भगवान महावीर के मुख्य उपदेश

० लोकेन्द्रकुमार जैन, (दाँता)

जैन धर्म के २४वे तीर्थ कर भगवान महावीर थे। भगवान महावीर को निर्वाण हुये २५०० वर्ष व्यतीत होने को जा रहे है। हमे भगवान महावीर के उपदेशो को प्राणी मात्र तक पहुँचाने के लिए २५००वाँ वीर निर्वाण महोत्सव को योजनाबद्ध मनाया जाना चाहिए।

आज विश्व को अशान्ति एव अनेक समस्याओ ने घेर रखा है। ये समस्यायें अगर हल हो सकती हैं तो केवल भगवान महावीर के उपदेशो को जीवन मे आत्मसात करने से हो सकती है, क्योकि आज हमे उन उपदेशो की आवश्यकता है। हम इस लेख मे भगवान महावीर के उपदेशो से विश्व शाति व सच्चा सुख को प्राप्त कर सकते हैं इस पर सक्षिप्त रूप से चर्चा करेंगे।

भगवान महावीर के मुख्य ५ उपदेश है —

(१) अहिंसा (२) सत्य (३) अचौर्य (४) ब्रह्मचर्य (५) अपरिग्रह।

१ **अहिंसा**—अहिंसा से विश्व के प्राणी शाति को प्राप्त कर सकते है। आज हम एक दूसरे प्राणी से भयभीत हैं, क्योकि प्राणी मात्र आज हिंसा कर ने पर उतारु हो रहा है। वह हिंसा इस बढ रहे भौतिक वाद से प्रगतिशील हो रही है। प्रत्येक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को दबाने के लिए हिंसक शस्त्रो का निर्माण करता है। अपने देश के धन को अस्त्र-शस्त्र बनाने मे अधिक खर्च करता है। अगर हम हिंसा को छोडकर अहिंसा-मार्ग पर चले तो हमे अस्त्र-शस्त्र बनाने की कोई आवश्यकता नही है। आवश्यकता है हमको अहिंसा के सिद्धान्त को पालन करने की।

२ **सत्य**—आज हम सत्य वचन को छोडकर झूँठ बोलने लग गये है। आज सब कार्य लिखित रूप मे होने लग गये हैं। एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य पर विश्वास नही है क्योकि झूँठ बोलना आजकल एक साधारण कार्य हो गया है। इस झूँठ से मानव आपस मे लडते हैं, दावा करते हैं तथा अपने को बर्बाद कर देते हैं। अगर हम सत्य के

सिद्धान्त पर चले तो आज हमको जो न्यायालय वगैरह हैं उनकी आवश्यकता ही नही पडे। केवल आवश्यकता है सत्य बोलने की।

३. **अचौर्य**—आज प्रत्येक मनुष्य चोरी करने मे लगा हुआ है। वह चोरी कर की, माल की, रिश्वत की, देश की सम्पत्ति की, देश की सीमाओ की, कार्य करने की आदि की, सब कार्य मे चोरी होने लग गयी है। जिसमे समाज मे, देश मे, आपस मे सघर्ष बढता जा रहा है। हिंसक घटनाएँ होनी शुरू होने लग गयी है। समाज की दूरी बढती जा रही है। अगर हम अचौर्य के उपदेश को धारण करे तो हम अराजनैतिकता को दूर कर सकते है।

४. **ब्रह्मचर्य**—आज प्रत्येक मानव की काम-वासनाएँ इतनी ज्यादा विकसित हो गयी है कि वह अपने को सयम मे नही रख सकता। आजकल प्राय: बलात्कार, प्रेम-विवाह आदि होते रहते है क्योकि मानव शील पर सयमित नही है। अगर हम (शील) ब्रह्मचर्य को धारण करे तो हम नैतिकता को प्राप्त कर सकते हैं।

५. **अपरिग्रह**—आज मानव की इच्छाएँ बढती जा रही है। वह धनी से ज्यादा धनी बनना चाहता है। जिससे गरीब व अमीर का अन्तर बहुत हो गया है तथा एक ऐसी क्राति आ गयी है कि गरीब अमीर को समाप्त करना चाहता है तथा पूजीपति अपनी पूंजी को अधिक बढाने के लिए गरीबो को समाप्त किये जा रहा है जिससे प्रतिदिन लूटमार की घटनाएँ होती है। अगर हम अपनी इच्छाओ को कम करे, परिग्रह कम रखे, आवश्यकता से अधिक वस्तुएँ न रखें तो कोई समाजवाद लाने की आवश्यकता नही है। आवश्यकता है केवल अपरिग्रह के सिद्धान्त को पालने की।

इस प्रकार हम उपरोक्त विवेचन से इस निष्कर्ष पर अवश्य आ जाते है कि आज हम भगवान महावीर के इन ५ मुख्य उपदेशो से शान्ति, सुख व सच्चा समाजवाद प्राप्त कर सकते हैं। आवश्यकता है कि हम भगवान महावीर के इन उपदेशो को जीवन मे उतारे।

"जो व्यक्ति अपने कर्तव्य का परिपूर्ण शक्ति से निर्वाह करता है वह किसी भी देशभक्त से कम नही चाहे फिर वह धोबी, दर्जी अथवा भगी क्यो न हो।"

—श्री श्रीप्रकाशजी

युग प्रवर्तक महावीर

० प्रकाशचन्द छाबडा

भगवान महावीर के जन्म का युग विश्व के धार्मिक जगत मे एक अद्भुत क्रांति, तत्वचिंतन एव दार्शनिक विचार बाहुल्य का युग था। उस समय विश्व मे सभी स्थानो पर अनेक विचारक व चिंतक हुये। सुकरात, कनफ्युशियस, बुद्ध, सभी महावीर के समकालीन चिंतक थे।

भारत मे यह युग वैदिक सभ्यता के ह्रास का युग था इस समय वैदिक सभ्यता मे शिथिलता का बोध होने लगा था तत्कालीन पुरोहितो द्वारा धर्म के नाम पर किए गए घोर अत्याचारो से मानव समाज त्रस्त हो गया था। ऐसे समय मे महावीर के अहिंसावादी उपदेशो ने प्राणी मात्र को अमानुषिक अत्याचारो से सात्वना ही नही दी वरन उनके लिए विकास का नवमार्ग भी प्रशस्त किया।

उन्होने प्राणी मात्र को करुणा व समानता का मूल मत्र दिया। उनका 'जीओ और जीने दो' का महान सदेश इसी दृष्टि का परिचायक है। उनकी अहिसा का अर्थ कायरता नही है। अत्याचारी को दड देना हिंसा नही है। उनकी अहिंसा क्षमा मे निहित है। इसी अहिंसा के सिद्धात ने तत्कालीन मानव समुदाय का सफलतापूर्वक मार्ग प्रशस्त किया था और इसी सिद्धान्त की आज के मानव को भी अत्यधिक आवश्यकता है, क्योकि एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को हडपना चाहता है। एक मानव एक दूसरे मानव को अनिश्वास की दृष्टि से देखता हे। क्षण मात्र मे मानव सभ्यता को ही नष्ट कर सकने मे समर्थ अनेकानेक हथियारो का आविष्कार हो चुका है। युद्ध तथा हिंसा द्वारा शक्ति प्राप्ति का परीक्षण असफल हो चुका है। ससार के बुद्धिजीवी स्थायी शान्ति की खोज मे प्रयत्नशील हैं। तब भगवान महावीर का 'अहिंसा परमो धर्म' का सिद्धान्त ही विश्व मे शान्ति स्थापित कर सकता है। इस युग मे जब से महात्मा गाधी ने भारत जैसे विशाल देश को अहिंसा के बल पर स्वतन्त्रता दिला कर विश्व के सामने अहिंसा का व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत किया है। तब से विश्व के विचारक

अहिंसा दर्शन के तत्व को स्वीकार करने लगे है। नेहरू का पचशील का सिद्धान्त भी इसी तत्व पर आधारित था।

वर्तमान की स्थिति को देखते हुए समाजवाद की आवश्यकता पर दो मत नही हो सकते। भगवान महावीर ने भी समाजवाद को जरूरी मानकर उसे धर्म का ही स्वरुप प्रदान कर दिया था। इसकी स्थापना उन्होने अपरिग्रह के मूलमंत्र द्वारा की। आवश्यकता से अधिक वस्तु का परित्याग ही अपरिग्रह है।

इसी अपरिग्रह पर समाजवाद की व्याख्या आधारित है। तथा वर्तमान विश्व की स्थिति को देखते हुए इसके व्यापक प्रचार व प्रसार की भी आवश्यकता है।

"निरपराधशरीर को मार डालना अनुचित है। हत्या अगर करनी हो तो मन की करनी चाहिए। शरीर जड है, वह अनुभव नही करता, मन अनुभव करता है। उसी से वेदना का जन्म होता है जिससे मानव आत्महत्या को तत्पर हो जाता है। शरीर की हत्या तो कुर्सी और मेज तोडने के समान है।"

—महर्षि रमण

महावीर एक झलक

० अरुणकुमार जैन

सूर्य और चन्द्र की आँखो से देखता हुआ, दिन और रात के पाँवो से चलता हुआ, विराटकाल पुरुप सदा से चलता आया है, चल रहा है, एव चलता रहेगा। उस विराट काल पुरुष के दमन चक्र से जो अपनी सत्ता को अक्षुण्ण बनाये रख सका उस विश्व वद्य उदारमना भगवान महावीर के प्रति नतमस्तक हो मै अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करता हू ।

'प्रत्यक्ष किम् प्रमाण, के अनुसार हम प्रमाण के प्रमाद मे न पडते हुये प्रत्यक्ष की ओर उन्मुख होते हैं। ग्रीष्म ऋतु, दोपहर का समय चिल-चिलाती धूप, देह झुलसाने वाली लू, ऐसे 'दीरघ दाघ निदाघ' मे एक गौरवपूर्ण युवक खडगासन लगाये-उन्नत ललाट नेत्र अर्द्ध मुकुलित नासिका पर केन्द्रित अतरग मे समाये हुये, मुख मडल पर गाभीर्य अध्ययन और तप के तेजो मडल की किरणे बिखेरती हुई आजानु-जूज निर्ग्रंथ जल मे कमल की भाति, शात निश्चल निर्विकार रूप और यौवन शक्ति-शील का सुन्दर समन्वय लिये मौन तपस्वी खडा है विश्व को शान्ति का सदेश देने ।

आगम के अनुसार जीव चौरासी लाख योनि मे भटकता फिरता है। चौरासी लाख योनि मे मनुष्य योनि सर्वश्रेष्ठ होती हैं और मनुष्यो मे सर्वश्रेष्ठ होता है राजा, उस राजा का यह राजपुत्र ? किस वस्तु की कमी थी इस राजयुवक को। रूप-यौवन, विलास की सामग्री, सभी कुछ तो थे इसके लिये ममतामई मा जान देती थी इस पर पिता का निश्चल प्यार राजपुत्र पर न्यौछावर होने को बाध्य रहता था। और प्रजा, प्रजा तो पलक पाँवडे बिछाती थी, जनता जनार्दन के स्वागतार्थ ।

लेकिन यह सुकुमार,-यह सुकुमार परिवार के मोह बन्धन की सीमा मे कब बधने वाला था। विश्व के आसू अपनी ओर खीच रहे थे। इसके विशाल हृदय मे असीम विश्व प्रेम का सागर हिलोरे ले रहा था। पिता ने विवाह का प्रस्ताव

किया तो कुमार ने सहज स्वभाव से उत्तर दिया।

महावीर ने कहा, पिता, यदि पुत्र और
पत्नी का प्यार। बाट सकूं जग को
तो बोलो, कैसा होगा यह व्यवहार।

माँ अपने पुत्र के लिये रक्त का दुग्ध बनाकर ममता का परिचय देती है। यह एक इकाई का दूसरी इकाई के प्रति प्रेम का उदाहरण है, किन्तु कल्पना कीजिये इस इकाई की, जिसका प्रेम इकाई दहाई से नही, लाखो करोडो से नही, जगत के असख्य प्राणियो के प्रति समान भाव से उमडता है, जिसके व्यक्तित्व मे विश्व प्रेम प्रतिबिंबित होता है, उसके शरीर मे बूद-बूद दुग्ध होना स्वाभाविक है। रक्त का न होना कोई आश्चर्य की बात नही। धन्य है ऐसे तीर्थङ्कर और तीर्थङ्कर का महान त्याग तथा उनका विश्व प्रेम। यही कारण है कि अहिसा की प्रतिमूर्ति की ओर आकर्षित होते है वृद्ध, नर-नारी, कुटिया से लेकर महलो मे रहने वाले।

हम जिस महान विभूति की झाकी का दर्शन कर रहे है उसके व्यक्तित्व मे चन्द्र की शीतलता, वन की उदासीनता, सागर की गम्भीरता एव हिमालय की उच्चता तथा अध्यात्मिकता की वीरता विराजमान है। प्रेम उनके चरणो मे अठखेलिया करता है, दया मुस्कराती है, करुणा द्रवीभूत होती है एव श्रद्धा स्वय नतमस्तक होती है।

कहा गये सिकन्दर और नैपोलियन की विजय के गीत गाने वाले? वे आये और देखे कि भारत-वर्ष मे भी ऐसी विभूतिया जन्म लेती हैं जो मित्र और शत्रु के साथ समान व्यवहार कर सबके हृदय पर बिना अस्त्र शस्त्र के समान अधिकार प्राप्त कर लेती है।

इस विराट व्यक्तित्व की ओर एकटक निहारते रहने को जी चाहता है किन्तु व्यक्तित्व पर छाये हुए अखण्ड तेज को देखकर आख स्वत चौधिया जाती है मस्तक झुक जाता है, श्रद्धा उमड पडती है। नेत्रोन्मीलन से मालूम पडता है, मन की कालिमा पूर्णत धुली नही है। साहस बटोर कर देखा तो पाया ब्रह्मचर्य की आधारशिला पर बैठा हुआ, अहिसा का अस्त्र लिये हुए, सत्य का तप करता हुआ, यह अडिग मौन तपस्वी विश्व सम्मोहन की बन्सी का स्वर गुजारित करने के लिये समस्त ससार की हृतत्री की वीणा के तार झकारने के लिये, सन्नद्ध, एकाग्रचित प्रतिज्ञाबद्ध आसीन है।

युग प्रवर्त्तक अहिसा के अवतार, शाति के वरेण्य अग्रदूत भगवान महावीर के दर्शन लाभ कर हमारे मुख से अनायास निकल पडता है शाति की विजय युद्ध की विजय से बढकर है युद्ध की विजय तन को प्रभावित करती है शान्ति की विजय मन को वश मे करती है। एक का प्रभाव क्षणिक होता है, दूसरी का स्थाई। और शान्तिमई प्रतिमा के दर्शनो के परिणामस्वरूप हमारे मन पटल पर शान्ति वातावरण की स्मृति की रेखाये अकित हो जाती है।

दया की महात्ता

० राजकुमार सेठी

किसी भी प्राणी का किसी भी तरह का कुछ भी बिगाड न हो पावे, सब लोग कुशलतापूर्वक अपना २ जीवन व्यतीत करे। ऐसी रीती का नाम दया है दयावान का दिल विशाल होता है। उसके मन मे सबके लिये जगह होती है। वह किसी को भी वस्तुतः छोटा या बडा नही मानता, अपने पराये का भी भेद–भाव उसके दिल से दूर रहता है। वह सब आत्माओ को समान समझता है तभी तो वह दूसरे का दुःख दूर करने के लिये अपने आपको बलिदान करने मे नही हिचकिचाता। एक बार की बात है कि एक हाईकोर्ट के जज साहब अपनी मोटर पर सवार होकर कचहरी जा रहे थे। रास्ते मे जाते हुये देखते है तो कीचड मे एक सुअर फसा हुआ है जो कि निकलने के लिये छटपटा रहा है। जज साहब ने अपनी मोटर रुकवाई, और खुद अपने हाथो से उस सुअर को निकाल कर बाहर किया, सुअर ने अपने अग फडफडाये जिससे जज साहब के कपडे छिटा छिट हो गये। कचहरी को देर हो रही थी। अत उन्ही कपडो को पहने हुये मोटर मे बैठ कर फिर कचहरी को रवाना हो गये। लोगो ने जज साहब का यह हाल देखा तो लोग आश्चर्य मे डूब गये कि आज उनका ऐसा ढग क्यो है ड्राइवर ने बीती हुई बात बताई तो सब लोग वाह वाह करने लगे जज साहब बोले कि इसमे मैंने बडी बात कौन सी की है मैंने तो सुअर का दुःख दूर नही किया बल्कि मेरा दुःख दूर किया है। मुझसे उसका यह दृश्य देखा नही गया। तब मैं फिर और क्या करता ठीक ही है किसी को भी कष्ट मे देखकर दयालु पुरुष का दिल दुखित हो उठता है इसमे सन्देह नही है। वह अमरता का वरदाता होता है जो कि अज्ञान और असमर्थ बालको को मैत्री भाव से उनके हित की बात कहते है, ऐसा करने मे कोई व्यक्ति अपनी आदत के वश होकर आभार न होते हुए प्रत्युत उसके साथ मे विभेद दिखलाते हुए उसकी किसी प्रकार की हानि भी करता है तो दयालु पुरुष उसे

भी सहन करता है परन्तु उसे मार्ग पर लाने की ही सोचता है।

सुनते ही हैं कि इ गलैंड मे होमरलेन नाम का एक विद्वान था यह जब भी किसी असहाय दुःखी पुरुष को देखता था तो उसका दिल पिघल जाया करता था। कोई बालक किसी भी प्रकार की बुरी आदत मे पड रहा हो तो उसे देखकर वह विचारने लगता कि इसकी तो सारी जिन्दगी ही बरबाद हो जायेगी किसी भी तरह से इसकी यह कुटेव दूर होकर इसका भविष्य उज्ज्वल होना चाहिये इस विचार के वश होकर उसने एक रिपब्लिकन नाम का आश्रम खोला जिसमे बुरी आदतो वाले बालक लाना और धीरे २ उनके जीवन को सुधारना ही उसका उद्देश्य था। एक बार कोर्ट मे एक ऐसा बालक पकडा गया जो कई बार चोरी कर चुका था। होमरलेन को जब पता लगा तो उसे वहा से अपने पास आश्रम मे ले आया परन्तु उसने तो आते ही उधम मचाना शुरू कर दिया। वहा के लडको से लडने लगा तो वहा के प्रबन्धक लोग घबडाये और होमरलेन से बोले कि सहाब यह लडका तो नठखट है सारे बालकों को ही बिगाड़ देगा। अतः इसे तो यहाँ रखना ठीक नही है होमरलेन बोला कि भाई मुझे इस पर दया आती है अगर यह यहा आकर भी नही सुधरा तो फिर कैसे सुधरेगा। इसका तो फिर सारा जीवन ही बरबाद हो जायेगा। खैर इसे तुम यहा नही रखते हो तो मुझे दो मै इसे अपने पास रखूंगा।

ऐसा कहकर जब वह उसे घर लाया तो वहा पर भी उसका तो वही हाल। उसके कमरे की, बहुमूल्य वस्तुओ को भी वह तो वैसे ही तोडने फोडने लगा फिर भी होमरलेन ने मन बिल्कुल मैला नही किया बल्कि हँसते हुए बोला यह घडी और बची है इसे भी तोड डालो, बस इतना सुनते ही उस लडके के दिल मे एकाएक परिवर्तन आ गया वह सोचने लगा देखो मैंने इनका इतना नुकसान कर दिया फिर भी मेरे प्रति इनके मन मे कुछ भी घृणा नही हुई देखो यह कितने गम्भीर है ऐसा सोचते हुये वह लडका होमरलेन के पैरो मे गिर गया और अपने अपराधो की क्षमा-याचना करने लगा।

वास्तव मे जिसका दिल दया से भीगा होता है वह किसी से भी मुह मोडना नही जानता वह तो अपना सब कुछ खोकर भी दुनिया के दुःखो को दूर करना चाहता है अतः वह तो सबको गुणवान देखना चाहता है और गुणवान को देखते ही उसका दिल प्रसन्नता से उमड उठताहै।

"That what I have proved before you to day viz. that vegetable has life, is not new, I am only stating what our great men of the past the Jain Acharyas had stated before."

—Jagdish Chanera Bose

भगवान महावीर और अहिंसा

—राजकुमार जैन जिलिया

आज का प्रत्येक प्राणी अहिंसा के गौरव से भली-भाति परिचित है । एक समय था जब कुछ लोग अहिसा को कायरता समझते थे और हिंसा की डीग मारते थे परन्तु महामानव महात्मा गाधी जैसे कर्मयोगी ने यह भली–भाति सिद्ध कर दिया कि अहिंसा वह अमोघ शस्त्र है जिसके सामने हिसा कुण्ठित होकर रह जाती है ।

अहिसा-का गुणगान सभी धर्मावलम्वी मुक्त-कण्ठ से करते है । साथ ही प्रत्येक व्यक्ति यह भी अनुभव करता है कि जैन धर्म मे अहिंसा पर विशेप वल दिया गया है जैन धर्म का महामन्त्र ही है "अहिंसा परमोधर्म" । जैन धर्म के अन्तिम तीर्थ-कर भगवान महावीर ने अहिंसा का बहुत प्रभाव-शाली शब्दो मे सिंहनाद किया था ।

आज का युग यदि अहिसा-तत्व को भली-भाँति समझ ले तो आज हमारे जीवन तथा राज्य की उलझी हुई सम्पूर्ण समस्याये सहज ही सुलझ सकती है । और युद्ध का भय दूर होकर विश्व शान्ति का स्वप्न सत्य सिद्ध हो सकता है । और सम्पूर्ण ससार मे सच्ची सुख शान्ति स्थापित हो सकती है ।

भगवान महावीर अपने समय के सर्वोत्कृष्ट महापुरुष थे । उन्होने जिस धर्म का उपदेश दिया उसे **जैनधर्म** अथवा अहिंसा धर्म के नाम से समझा जाता है । उनका जीवन ही अहिंसामय था । उन्होने अपने जीवन को मानवता के ढाचे मे ढाल उसे पवित्र ज्योतिर्मय वना लिया था उनके वाद ऐसा महापुरुष आज तक नही हुआ ।

उनका वचन व्यवहार अनेकान्तमय था । उन का आचरण अहिंसामय था । वास्तव मे अहिंसा का पालन किए विना न व्यक्ति सुख शान्ति प्राप्त कर सकता है और न ही समाज मे शान्ति रह सकती है । भगवान महावीर ने अहिंसक जीवन-यापन के लिए ही श्रावक के लिए अष्ट मूल गुणो के पालने का उपदेश दिया ।

(१) मास मत खाओ ।
(२) शराव मत पीओ ।
(३) मधु (असख्य मधुमक्खियो और उनके अ डो को निचोड कर प्राप्त किया गया शहद) मत खाओ ।
(४) किसी प्राणी को न सताओ ।
(५) झूठ मत वोलो ।
(६) चोरी मत करो ।
(७) अपनी विवाहिता पत्नी के अतिरिक्त

दुनिया की समस्त स्त्रियो को माता, बहन, पुत्री के समान समझो ।

(८) अपने कुटुम्ब-पोषण के लिए आवश्यक धनधान्य इत्यादि की निश्चित मर्यादा बाँध लो, इससे अधिक की इच्छा न करो ।

अहिंसा के आचरण को शक्य और सरल बनाने के लिए महावीर ने हिंसा को ४ भागो मे बाटा ।

(१) सकल्पी
(२) आरम्भी,
(३) उद्योगी
(४) विरोधी ।

बिना अपराध के जान-बूझ कर जब किसी जीव के प्राण लिए जाते हैं या उसे सताया जाता है, वह—सकल्पी हिंसा है जैसे कसाई पशु वध करता है या देवी के सामने बलिदान किया जाता है ।

झाडने बुहारने मे, रोटी बनाने मे, आने जाने मे सावधानी रखते हुये भी जो हिंसा हो जाती है, वह आरम्भी है ।

व्यापार आदि मे सावधानी रखते हुए भी जो हिंसा हो जाती है, वह उद्योगी हिंसा है । जैसे वस्त्रादि के व्यापार मे हिंसा होती हैं ।

अपने या अपने आत्मीय की रक्षा करने मे जो हिंसा हो जाती है वह विरोधी है ।

इनमे से गृहस्थ केवल सकल्पी हिंसा का त्याग करता है । गृहस्थाश्रम की ११ श्रेणिया है । ज्यो ज्यो गृहस्थ कौटुम्बिक उत्तरदायित्व से निवृत्त होता जाता है त्यो-त्यो उसके अहिसा पालन की जिम्मेदारिया बढती जाती है । जिनके ऊपर दूसरो की रक्षा का भार है संकट आने पर उनका घर मे छिप कर बैठ जाना अहिंसा नही कायरता है । सच्चा अहिसक कायर नही होता । सच्ची अहिंसा वही पाल सकता है जो निर्भय है । जिसे दुनिया का कोई भी भय सताता है वह महावीर का सच्चा उपासक नही है क्योकि जीवन से मोह हुए बिना भय नही होता और मोह ही सबसे बडा शत्रु है । अत कहा है—

गृहस्थो मोक्ष मार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् ।
अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुने ।।
—आचार्य समन्तभद्र

जैन अपनी मन्त्र, शस्त्र और धन की शक्ति रखते हुये प्राणी मात्र की बाधा-दुख को न देख सकता है न सुन सकता है अर्थात् उसका प्रतिकार करता है । महावीर की अहिंसा मे स्वाद के लिए, मनोविनोद के लिए, नीरोगता लाभ करने के लिए और धर्म बुद्धि से किसी प्राणी की हिंसा करने की सख्त मनाई है । रह जाता है आत्म-रक्षा और आत्माओ की रक्षा का प्रश्न ?—उसके लिए दो ही मार्ग है । पहला और सर्वोत्कृष्ट मार्ग है विरोधी का नि शस्त्र मुकाबला करना और अपने प्राणो को हँसते-हँसते उत्सर्ग कर विरोधी को सुमार्ग पर लाना, परन्तु यह मार्ग उन सर्वस्व त्यागी प्राणियो के लिये है जिनके सामने आत्म-रक्षा का कोई प्रश्न ही नही है । महावीर ने अपने जीवन मे इसी सर्वोत्कृष्ट मार्ग को अपनाया था । दूसरा मार्ग है विरोधी का सशस्त्र प्रतिरोध करना और जहाँ तक शक्य हो उसका खून बहाये बिना ही अपनी रक्षा मे सफल हो जाना किन्तु जीवन के मोह से निराश्रितो को असहाय छोडकर कभी न भागना । राजन्य वर्ग के लिए महावीर का आदेश था ।

"य शस्त्र वृत्ति समरे रिपु स्यात् य कटको वा निज मण्डलस्य
अस्त्राणि तत्रैव क्षिपन्ति शूरा न दीन कानीन शुभाशयेषु ।।"

जो युद्ध मे शस्त्र लेकर युद्ध करने के लिए आया हो, अथवा स्वदेश का कांटा हो, उसी पर वीर शस्त्र उठाता है, दीन कायर और सज्जन पुरुषो पर नहीं । महावीर की अहिंसा का सार है

तुम स्वयं जीओ और जीने दो जमाने मे सभी को अत जो व्यक्ति वर्ग, समाज, राष्ट्र, दूसरे व्यक्तियो, वर्गों, समाजो और राष्ट्रो के प्रति व्यवहार करते समय इस भावना को ध्यान मे रखता है, उनकी रक्षा का ध्यान रख कर निर्वाह करता है, वह व्यक्ति वर्ग, समाज राष्ट्र मे केवल अपने जीवन की ही भावना है जो दूसरे व्यक्तियो, वर्गों समाजो, राष्ट्रो को अपने स्वार्थ का साधन बनाए हुए है, उनको उतने ही अ शो मे जीवित रखना चाहते है। जितने अ श मे उनका जीवन उनके स्वार्थ का साधक हो सकता है। वे व्यक्ति, वर्ग, समाज, राष्ट्र अहिंसक नही कहे जा सकते ।

भगवान महावीर की २५०० निर्वाण जयन्ति पर समस्त समाज विशेषत: जैन समाज से प्रार्थना करता है कि भगवान महावीर की अहिंसा को अपने अन्तरग मे ढाले तथा जीओ और जीनो दो के सन्देश को यथार्थ रूप प्रदान करें। अहिंसा के मार्ग पर चले जिससे कि विश्व को एक नया रूप मिले हमारा परम कर्तव्य है कि भगवान महावीर के सन्देशो को जन-जन तक पहु चाये जिससे भगवान महावीर का २५०० वा निवार्णोत्सव सफल हो सके।
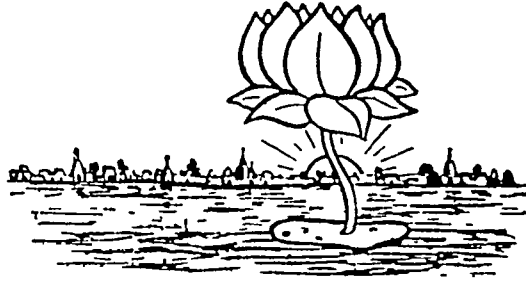
आज का युग जिसमे हम जी रहे हैं, पतितो का युग है। इस युग मे उस समय तक हर व्यक्ति ईमानदार है जब तक कि वह रगे हाथो न पकडा जाये।

—एस डा० राधाकृष्णन्

सीकर स्थित राजा साहाब की कोठी का एक भव्य दृश्य
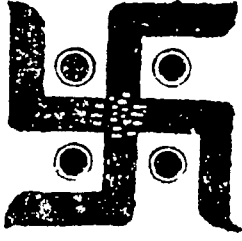
जैनधर्म में नारी

—सुशीलादेवी जैन

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता के कथनानुसार जहा नारी की पूजा होती है, सम्मान होता है वहा देवता निवास करते है अर्थात् वहा रहने वाले देव तुल्य हैं। विश्व धर्म मे नारी को धर्म का आधार स्तभ कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। सृष्टि के प्रारम्भ से ही धर्म की नीव महिलाओ की प्रभावना द्वारा जागृत हुई है। पतिव्रता सीता, सती चन्दना, रानी चेलना, सोभा, द्रोपदी इत्यादि के आदर्श, आज भी मानव हृदय को झकझोर कर धर्म की पावन नौका मे प्रवेश कर पार उतरने को प्रोत्साहित करते है। नारी नर की पोषक, सरक्षक तथा अर्द्धागिनी बनकर प्रत्येक क्षरण कार्य मे सलग्न रहकर ही अपने को सन्तुष्ट पाती रही है।

जैसा पिलावोगी पानी, वैसी ही होगी वाणी।
जैसा खिलाओगी अन्न, वैसा ही होवेगा मन।

प्रस्तुत कथन के अनुसार नारी नर की निर्मात्री बन जाती है। यदि नारी नारीत्व की व्यवस्थित सचालिका है तो हमारा कुटुम्ब, समाज, देश राष्ट्र शान्त और सुखी जीवन पूर्ण कर सकेंगे। इसमे तनिक भी सदेह नही है। हम देखते है कि हमारे आपस के व्यवहार इतने निन्द्य कटु व घृणात्मक हो जाते है कि अविवेक से छोटी-छोटी सी व्यर्थ की वार्ताओ मे सघर्ष करते-करते हाय धाय, तेरी-मेरी मे इतने व्यस्त रहते है कि धर्म, और कर्तव्य-पथ को सर्वथा विस्मृत कर बैठते हैं।

धर्म कोई बाजार मे बिकने वाली वस्तु नही प्रत्युत वह आचरण की पवित्रता सयम पूर्ण साचे मे ढलकर आदर्श चरित्र निर्माण की प्रेरणा प्रदान करता है। शिशुओ के सुसस्कार माता के गर्भ से ही पल्लवित होने लगते है। धर्म का आलोक जड चेतन पर समान रूप से पडता है, परन्तु वह अपनी शक्ति के अनुसार उसको ग्रहण करता है। जड की क्रिया अनिश्चित है, चेतन की क्रिया विवेकपूर्ण है। सृष्टि के प्रारम्भ से ही नारी का धर्म पुरुष की अपेक्षा अधिक सबल, जागरूक, तथा प्रेरणादायक रहा है। आध्यात्मिक विश्व मे उसका उपासनामय तथा भौतिक जगत मे वासनामय रूप माना है किन्तु कीचड से कमल की उक्ति के अनुरूप जिस नारी ने पुरुषार्थ का आश्रय लिया, वही सदैव इतिहास मे अमर रही और रहेगी।

गृह, समाज, देश का पूर्ण सरक्षरण नारी समाज पर अवलबित है। जैसा सुयोग्य वातावरण वह रखेगी, उसके अनुकूल उनके धर्म की क्रिया चलेगी। सर्वप्रथम हमारा खान-पान ही लीजिये। हम जीने के लिए नही खाते, प्रत्युत पचेन्द्रियो के आश्रित

खाने के लिये जीते हैं। आज हमारी खाद्य वस्तुये चटपटे मसाले युक्त हानिप्रद तथा पेय पदार्थ चाय, काफी धूम्रपान इत्यादि नशीले पदार्थ मस्तिष्क और हृदय विकार पैदा करने वाले होते है।

कहने का आशय यह है कि हमारे दैनिक जीवन का सचालन नियमबद्ध भोजन सादा व सन्तुलित तथा रहन-सहन सादा और सयमपूर्वक होना चाहिये। इनका प्रभाव हमारे जीवन पर बहुत गहरा पडता है।

राजुल की धर्म परायणता हमारे जैन इतिहास मे गौरव का उत्कर्ष है। किसी महान विचारक के शब्दो मे : धनि धन्य महिलारत्न राजुल, युवा वय मे तप धारा। भववास सब भोग तज, निर्वाण सुख मे चित्त धारा।

गिरनार के उस आम्रवन मे, ध्यानमय आसनधरा।
उच्च पतिव्रत दिखाकर, सुयश से जगमन्द हरा।

विश्व का कोई भी धर्म उठाकर देख लीजिये। नारी के आदर्श ही धर्म की जड है। उसने अपने आपको जाना, पहिचाना और उसके अनुकूल अपना चरित्र-निर्माण किया है। सृष्टि के अधिष्ठाता मनु ने श्रद्धा के सहयोग से विश्व का सरक्षण किया।

सीता राम हमारे विश्व इतिहास के जीते जागते प्राण है। सीता को पहले इसलिये कहा कि वह अपने सत्य पर दृढ रहकर अग्नि मे प्रवेश कर गई और वे धर्म के प्रभाव से पानी हो गई और देवताओ ने पुष्प वृष्टि की। राम का आदर्श मर्यादा पूर्ण रहा।

मीरा धर्म के बल पर विष को अमृत मानकर गले उतार रहीं है विष का प्याला राणा ने भेजा, अमृत दिया बनाय। किसी महान मनीषी के मर्म-स्पर्शी शब्दो मे:—

नारी नारी मत कहो,नारी नर की खान।
नारी ही से होत है ध्रुव प्रहलादसमान।

यह बात निर्विवाद रूप से माननी पडेगी कि नारी नर की पोषक है यदि उसके जीवन मे धर्म उतरेगा तो विश्व के समस्त सघर्ष समाप्त हो जायेंगे। हमारे जीवन का नया प्रभात उदय हो जायगा। महिलाओ की प्रभावना द्वारा ही धर्म वृद्धिगत हो पाया है। स्त्रियो की चरित्रोपयोगिता मे ही उसका गौरव प्रेरणा का अजस्त्रश्रोत बहता रहा है। सती चन्दना का जेल मे डालना, और उसमे भी उसकी धार्मिक भावना मुनि को आहार कराकर स्वय का भोजन करना एक रोचक आदर्श कहानी है। भगवान आदिनाथ का सतीचन्दना द्वारा इक्षुरस का पान करने से नारी के व्यक्तिगत धर्म की प्रभावना का प्रथम परिचय प्राप्त हुआ। जडाव जी ने तो अपने काव्य मे भावनामय और साधना-रूप मे नगीने ही जड डाले। स्त्री भक्त कवियित्रियो ने काव्य-रचना का प्रवाह निर्गुण और सगुण दोनो ही धाराओ मे प्रवाहित किया है। डाक्टर नरेन्द्र भानावत के अनुसार स्त्री के कृतित्व की सामान्यत. उपेक्षा ही रही है। यो तो वैदिक सस्कृत साहित्य से ही विश्वपा, घोषा, नितम्बा, गार्गी, मैत्रयी, लोपामुद्रा, पमीवैवस्मती इत्यादि अनेक महिलाओ ने धर्म साहित्य सृजन मे अभूतपूर्व योगदान दिया है।

बौद्ध भिक्षुणियो ने भी ससार से विरक्ति के द्वारा भावपूर्ण भजनो से आत्मा का आलोक फैलाया है,परन्तु जैन कवियित्रियो का साहित्य सृजन अब तक मौन ही मानना पडेगा।

हमारा विश्व धर्म प्रधानत उत्तम रूप मे मुनि आर्यिकाओ श्रावक-श्राविकाओ द्वारा ही पल्लवित और पुष्पित रहा है। हिन्दी कावियत्रियो पर शोध-पूर्ण कार्य करने वाली महिलाओ मे डा० सावित्री सिन्हा का नाम आदर के साथ लिया जा सकता है। भीमा, पद्माचारिणी इत्यादि ने डिंगल साहित्य सृजन द्वारा आत्मबोध कर विश्व को झकझोर डाला है। किन्ही ने सगुण धारा मे और किसी ने निर्गुण प्रवाह मे अपने को अर्पित कर डाला।

श्वेताम्बर परम्परा का पोषण करने वाली

कुशलाजी, रूपा जी, गुलाबजी, सौभाग्यमतीजी, जडाव जी, लज्जावती जी, नूर सुन्दरी, चन्दा जी इत्यादि कवियित्रियो का योगदान ओजस्वी एव प्रेरणात्मक रहा है। सभी धर्मों, शास्त्र भडारो मे सूची प्रकाशन से अन्य भक्त कवियित्रिया प्रकाश मे आ सकेगी।

विश्व धर्म सदैव नारी चेतना का प्रवाह रहा है। गाडी के दो पहियो की समानता मे उसकी प्रगति संभव है। पुरुष की उपेक्षा उसके जीवन का अभिशाप कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। नारी सजग है,पुरुष उसका प्रहरी है, तो फिर क्यो न दोनो के सहयोग से धर्म की पावन नौका मे प्रवेश किया जाय। जिनकी अन्तस्निधी खुल गई है वह वास्तव मे धर्म के रक्षक व पोषक कहे जा सकते है, अन्यथा नही। जीवन जीने के लिए है, रोने और तडपने के लिए नही। प्रत्येक वस्तु मे सत्य आवश्यक है।

सत्य शिव सुन्दर के अनुसार विश्व के कण-कण मे ईश्वर व्याप्त है। हमे धर्म का चारित्रगत अवलोकन किये बिना अनुभव नही हो सकता है। यह तो परीक्षा प्रधान मापदड है। हम स्वय इसमे प्रवेश करेगे, तभी इसकी गहराई को प्राप्त करने मे सफल हो सकेंगे।

जीवन मे धर्म नारी के प्राण है। सत्य, शील, व्रत इत्यादि उसके बहुमूल्य आभूषण है। सोमा सती के गले मे सास के द्वारा सर्प डालना, और इसी धर्म के बल पर पुष्प माला मे परिर्वितत होना जैन धर्म की इतिवृत्तात्मकता नही तो और क्या है। सोमा सती ने तुमको ध्याया, नाग का हार बनाया जी यह एक साधारण लोकोक्ति है। द्रोपदी का उच्च आदर्श हमारे विश्व धर्म आधार स्तभ है। जब भरी सभा मे दुशासन उसकी साडी खीचकर उसकी प्रतिष्ठा मिट्टी मे मिलाना चाहता है किन्तु धर्म की प्रभावना से द्रोपदी का चीर बढाया, सीता प्रति कमल रचाया। आज भी धर्म की रक्षा सफल मापदड है।

चम्पा बाई ने तो पैसठ वर्ष की अवस्था के पश्चात् धर्म की पावन नौका मे प्रवेशकर भजनो का सग्रह चपाशतक नाम से आत्मा परमात्मा का मधुर मिलन ही प्रस्तुत कर डाला। धर्म कोई बाह्याडम्बर की वस्तु, न नाम कमाने की, न बाजार मे बिकने की नही प्रत्युत हमारे दैनिक जीवन का दर्पण तथा यथार्थ प्राण है, जिसने इसको जाना पहिचाना और उसके अनुसार चरित्र-निर्माण किया। वह आज दैहिक रूप मे हमारे समक्ष चाहे न हो किन्तु उनके प्रतिमूर्त पारमार्थिक रूप हमारे जैन इतिहास के ही नही वरन विश्व के इतिहास मे गौरव के चिरस्मारक रहेगे। जिसकी श्रद्धा भक्ति अटल है उसकी शक्ति स्वतः सुदृढ बन जाती है। उसकी कर्मठता के आगे ऋषि मुनि भी तथा स्वर्ग के देवता भी द्रवित हो जाते है। अत विश्व के धर्म समाज मे नारी सर्वोत्कृष्ट स्थान की अधिष्ठाता सरक्षक पोषक रही है और नव निर्मात्री होती रहेगी इसमे तनिक भी सन्देह नही है और रहेगा।

उबलते हुए पानी मे जिस प्रकार हम अपना प्रतिबिम्ब नही देख सकते उसी प्रकार हम क्रोधी वन कर यह नही समझ सकते कि हमारी भलाई किस मे है।

—प्रेमचन्द

भक्त कवियित्री–चम्पादेवी एक अध्ययन

सुशीला देवी बाकलीवाल
एम ए जयपुर

चम्पादेवी एक प्रसिद्ध कवियित्री थी । स्त्री-समाज की वह उन इनीगिनी महिलाओ मे से है जिन्होने साहित्य निर्माण मे रुचि ली, और जीवन के अन्तिम वर्षों मे अपने आपको भक्ति रस मे डुवो दिया । भक्ति मे भावविभोर होकर अन्तरात्मा से से भाव निकले, वे स्वमेव पदो के रूप मे परिवर्तित हो गये । "चम्पा शतक" यद्यपि इनकी एक मात्र कृति है लेकिन वह अकेली ही चिरकाल तक कवि-यित्री के यशोगान के लिए पर्याप्त है । "चम्पा शतक" हिन्दी पद साहित्य की उत्कृष्ट कृति है जिसमे भक्ति रस से ओत-प्रोत १०१ पदो का सग्रह है । १९वी शताब्दी मे ये प्रथम स्त्री कवि थी, जिन्होने अपने जीवन के सध्याकाल मे साहित्यिक क्षेत्र मे पदार्पण किया और थोडे ही समय मे अपनी प्रतिभा से हिन्दी भक्ति साहित्य अलकृत किया । भक्त कवियित्रियो मे मीराबाई एव जडाव-बाई के पश्चात् चम्पादेवी का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होने भक्ति के भावो से ओत प्रोत होकर हिन्दी साहित्य की रचना की एव अपने को अर्हद-भक्ति मे समर्पित कर दिया ।

चम्पादेवी देहली निवासी श्री सुन्दरलाल जैन टोग्या की धर्मपत्नी थी । आपके पिता अलीगढ निवासी श्री मोहनलाल पाटनी थे । आपके दो बडे भाई थे । १९१३ के करीब आपका जन्म हुआ । आपके जीवन पर आपके वडे भाई श्री प्यारेलाल का विशेष प्रभाव पडा । परिणामस्वरूप आपकी रुचि स्वाध्याय की ओर बढने लगी । छोटी अवस्था मे ही आपका विवाह हो गया । आपके पति श्री सुन्दरलाल जवाहरात के कुशल व्यापारी थे । पिता एव पति दोनो ही घरो मे आपका पूर्ण समादर था । किन्तु ३० वर्ष की अवस्था मे ही आपके पति मृत्यु के करालगाल मे प्रवेश कर गये । आपके कोई सन्तान भी नही थी । एक ओर पति का वियोग तथा दूसरी ओर सन्तान का अभाव दोनो ही दारुण दु ख आपको झेलने पडे । ससार के नश्वर क्षणो से विरक्त होकर आपने अपना अधिकतर समय स्वा-ध्याय मे लगाया । ६६ वर्ष की उम्र मे आप भयकर रूप से बीमार हुई, औषधि लेने पर भी रोग दूर न हुआ । अन्त मे भौतिक ससार से निराश होकर आपने अर्हद भक्ति को ही एक मात्र सहारा माना, और उसमे तल्लीन होने पर निम्न पद आपके मुख से स्वत ही निकल पडा ।

पडी मझदार मेरी नैया, उबारोगे तो क्या होगा ।
तारणतरण जगतपति हो, जु तारोगे तो क्या होगा ।।
यहा कोई है नही मेरा, मेरे रक्षपाल तुम्ही हो ।
बही जाती मेरी किश्ती, निहारोगे तो क्या होगा ।।

भाव विव्हल हो कवियित्री अपनी सुधबुध एव अपना अस्तित्व खो बैठी । धीरे-धीरे भक्ति की धारा नदी के रूप मे परिवर्तित हो गई, और एक के बाद दूसरे पद का निर्माण होता चला गया—

तेरे दर्शन से हे स्वामी, लखा है रूप मैं मेरा ।
तजू कब राग तन धन का, वे सब मेरे विजाती है ।।

अर्हंद भक्ति की कृपा से उनका रोग शात हो गया । ६० वर्ष की अवस्था मे उनका देहात हो गया ।

"चम्पा शतक" मे यद्यपि अधिकाश पद भक्ति-परक है किन्तु कुछ पद आध्यात्मिक, सामाजिक एव उपदेशी भी मिलते है । अनेक राग एव रागनियो मे निर्मित इन पदो मे कवियित्री ने जो भाव भरे हैं उससे उनकी विद्वत्ता, सिद्धातभिज्ञता एव आध्यात्मिकता के दर्शन होते है । आपके पदो को हम भक्तिपरक, शिक्षापरक और आध्यात्मिकपरक इन तीन भागो मे विभाजित कर सकते है ।

आपके भक्तिपरक पदो मे कवियित्री के भक्त हृदय की स्पष्ट झलक निहित है । उनकी अन्तर्वेदना पद के प्रत्येक वाक्य से ध्वनित होती है । इन पदो का पारायण करने से ऐसा प्रतीत होता है मानो उनमे मानव-हृदय गत भावो को गूथ कर सामने रख दिया हो । आपकी कविताओ मे परमात्मा की शात मुद्रा के दर्शन होते है जिससे विपत्तिया स्वत दूर होने लगती है । सभी पद वासना से मन को हटाकर अपने आत्मस्वरूप मे लग जाने की प्रेरणा देते है । मानव विराट शक्तिशाली होता हुआ भी दीन, गरीब एव अल्प बुद्धि वाला है इसलिये दुखो से घबराकर उनसे वह छुटकारा पाना चाहता है । कवियित्री की धारणा है कि कर्म मोह का प्याला पिला कर उसे पूर्णत ज्ञानी बना देता है किन्तु अर्हंद भक्ति ही एक ऐसा अमोघ मत्र है जिससे आत्मा का कल्याण सम्भव है और इसी भावावेश मे वे गा उठती है—

"करम म्हारो काई करसी,
जो म्हारे परमेष्ठी आधार"

आपको परमात्मा के समान ही गुरु मे भी अटल विश्वास था । सच्चे गुरु वीतरागी होते है उनकी भक्ति ही मोक्ष मार्ग मे सहायक होती है । गुरु ही उसे उचित मार्ग पर चलने का उपदेश देते है । अत गुरु कैसे हो ? यह उन्होने इस प्रकार बताया है—

जिन्हो का ध्येय आतम है,
लगी है लौ जहा जिनकी
नही कुछ खबर बाहर की,
सुरति लगी जिनमे लगी जिनकी
इसी चित्त ध्यान केवल ते,
चिदानन्द ज्योति जागी है
मिलेगे कब गुरु हमको,
जो साचे वीतरागी है ।"

अध्यात्मपरक पदो मे भी कवियित्री ने अध्यात्म की जो गगा बहायी है वह अपने आप मे पूर्ण है । वह आत्मा को सम्बोधित करके जगत के सभी विकल्पो को त्याग कर अपने आत्म सुख को वरण करने के लिये कहती है । आत्मा परमात्मा एक है । परमात्मा सिद्धावस्था को प्राप्त हो गये है, किन्तु आत्मा अभी शरीर बन्धन से मुक्त नही हुई, बस यही दोनो मे भेद है । आपको आत्म-ध्यान की तीव्र अभिलाषा है । इसीलिये आप कहती है—

मै कब निज आतम को ध्याऊँ
पर परिणति तजि, निज परिणति गही,
ऐसी निज निधि कब पाऊँ ।

इतने से ही उनको सन्तोष नही होता—

"समकित बिन गोता खाओगे,
दर्शन बिन गोता खाओगे ।"

कवियित्री ने अपने कर्म के फल पर भी गहरी

आस्था प्रकट की है । जैसा कर्म वैसा ही फल—

कारण कौन प्रभु मोहि समझाओ
एक मात ने दो सुत जाये,
रग रूप मे भेद लखायो ।
एक चटशाला पढे दोऊ मिलीं,
एक भयो योगी एक व्यसन लुभायो ।।

शिक्षात्मक पदो मे कवियित्री ने मानव को ऐसे ज्ञान का मन्त्र बताया जिससे उसका कल्याण हो सके—

१. वार-बार इम भ्रमण कियो,
बहु कठिन-कठिन यहाँ आयो रे
फिर यह दाव मिले नही भोदू,
यह सतगुरु फरमायो रे ।।
२ चेतन कुमति घर मति जाय,
तो कू सुमति रही समझाय ।
हिंसा झूठ चोर धन लायो,
पर नारी पर मन भायो ।
अरे यह पाप महा दुख दाय,
चेतन कुमति घर मति जाय ।।

इस प्रकार हम कह सकते है कि आपकी कविता सग्रह अपने आप मे स्वत पूर्ण है । पदो मे तत्कालीन समाज मे फैली हुई बुराईयो की ओर भी व्यग किया गया है । शतक की भाषा शुद्ध हिन्दी है किन्तु कही-कही ब्रजभाषा का पुट भी दिखाई देता है उनका यह प्रयास हिन्दी भाषा के प्रति अगाधनिष्ठा का द्योतक है । प्रस्तुत शतक की भाषा अत्यधिक प्राजल एव मधुर है । अत चम्पा-शतक सभी दृष्टियो से भक्ति साहित्य की एक उत्तम कृति है जिसके सतत् अध्ययन एव मनन से मानव मात्र को शाति मिल सकती है ।[1]

---

१. देखिये चम्पाशतक-सम्पादक-डॉ० कस्तूरचद कासलीवाल, प्रकाशक-साहित्य शोध विभाग दि० जैन अ० क्षेत्र श्री महावीर जी, जयपुर

जिसने अपने मन को वश मे कर लिया उसने ससार भर को वश मे कर लिया किन्तु जो मनुष्य मन को न जीत कर स्वय उसके वश मे हो जाता है उसने सारे ससार की अधीनता स्वीकार करली ।

—अज्ञात

अब तुमसा वीर कहां होगा

सुरेन्द्रकुमार जैन

हे वीर पुरुष ! हे महावीर ! अब तुमसा वीर कहा होगा ।
तुम इस युग के निर्माता थे, अब युग निर्माण कहा होगा ।।

अब तुमसा वीर कहा होगा !

सन्देश नया दर्शाया था, सत का झण्डा फहराया था ।
अपने उपदेशों से तुमने, जगती का तिमिर मिटाया था ।।
पिसती कराहती मानवता का अब उद्धार कहा होगा ।
तुम इस युग के निर्माता थे, अब युग निर्माण कहा होगा ।।

अब तुमसा वीर कहा होगा !

जियो और जीने दो का महामत्र समझाया था ।
विश्व धर्म का उच्च सितारा तुमने ही चमकाया था ।।
मानवता गिरती जाती है उसका उत्थान कहा होगा ।
तुम इस युग के निर्माता थे अब युग निर्माण कहां होगा ।।

अब तुमसा वीर कहां होगा ?

"महावीर की वाणी"

महावीरप्रसाद जैन

सत्य–अहिंसा–धर्म नीति,
शुचि धाराओ का सगम ।
महावीर की मृदु वाणी को,
करता मानव हृदयगम ।।

गरल ज्वाला जब–जब सुलगे,
दीन हीन के प्रागण मे ।
तब–तब वर्धमान की वाणी,
सुधा सलिल बनती क्षण मे ।।

जय जिनेन्द्र की वाणी से ही,
जग ने निज वाणी पायी ।
पाकर ज्ञान बने नर ज्ञानी,
उनके ही सद्–अनुयायी ।

बौद्ध, विज्ञता औ, प्रबुद्धता,
पाई नही गुरु से क्या ?
वाणी सरस्वती ने दी हो,
प्रभु–प्रकृति ने किया ।।

जल–थल–नभ सब स्वर्ग के वासी,
'चर औ' अचर सकल प्राणी ।
जीवन सफल सबो का करती,
'महावीर' की यह वाणी ।।

रीतियुगीन जैन कथात्मक काव्य : समान रचनांग एवं विशिष्ट लक्षण

श्रीमती डा किरण जैन
एम. ए , पी–एच. डी

'कथ्' (कहना) धातु मे 'टाप्' प्रत्यय लगाने से 'कथा' शब्द बना है। 'टाप्' मे से केवल 'आ' अवशिष्ट रहता है ट्प् का लोप हो जाता है। कथा का साधारण अर्थ है जो कहा जाये। विशिष्ट अर्थ है किसी ऐसी कल्पित घटना का कहना, वर्णन करना जिसका निश्चित परिणाम हो। जैन कथा काव्यो मे जीवन की कतिपय विशिष्ट घटनाओ का लोक जीवन के विविध तत्वो यथा–कथानक रूढियो आदि के साथ इतिवृत्तात्मक एव काव्यात्मक दोनो ही प्रकार की शैलियो मे वर्णन होता है जिसके कारण उसमे कथा और काव्य दोनो विधाओ का सहज सन्निवेश हो जाता है। कथा के प्रमुख तत्व जिज्ञासा एव उत्सुकता तथा काव्य के प्रमुख तत्व भावयोजना एव अलकार निरूपण दोनो रहते है। ये लोक कथा या जनश्रुति के रूप मे प्रचलित होने पर भी व्रत महात्म्य से सबद्ध है। इसी कारण इनमे लौकिक तत्वो के परिपार्श्व मे अलौकिक तत्वो का भी सहज समावेश हो गया है और समस्त कृतियो की भाव योजना का पर्यवसान शात रस मे होता है।

इस अधिनिबध मे निम्नलिखित कृतियो के आधार पर विवेचन किया जायेगा —

(१) रविव्रत कथा (२) निशिभोजन कथा (३) दान कथा (४) रोहिणीव्रत कथा (५) सम्यकत्वकौमुदी।

उपर्युक्त कथा काव्यो मे निम्नलिखित समान रचनाङ्ग प्राप्त है :—

१. प्रारम्भ मे ईश वदना:—उपर्युक्त सभी कृतियो के प्रारम्भ मे प्रभु की वदना की गई है।

२ **अलौकिक तत्वों का समावेश —**

निशिभोजन कथा—साँप का मणिमय हार बन जाना।

रविव्रत कथा—धरणेंद्र का आसन डोलना।

दान कथा—वृषभ सेना के स्नान किये जल से कुत्ते का निरोगी होना।

सम्यकत्वकौमुदी—स्वर्णखुर चोर का अजन लगाकर समस्त ससार को देखने का तथा उसके स्वय के अदृश्य रखने का वर्णन ।

रोहिणी व्रत कथा—दुर्गधा का व्रत के प्रभाव से अच्छा हो जाना ।

३ कथावर्णन की शैली इतिवृत्तात्मक होते हुये भी भाव, वस्तु एव प्रकृति वर्णन मे यत्र-तत्र अलकार-योजना ।

निशिभोजन—	रूपवती भारी यह सोय । मानो सुर कन्या ही होय !
रविव्रतकथा—	नैनन नीर वहे असरार । जिमिधन वरसे मूसलाधार ।।
दानकथा—	सर्व दीप मधि जबू द्वीप । मानो जग मे लसत महीप ।।
सम्यकत्वकौमुदी—	हथिनी सूली ले विकराल । मानो सनमुप आयो काल ।।
रोहिणी व्रत कथा—	कन्या आई मडप माझ । मनो सभा मे फूली साँझ ।।

४ **कथानक रूढियो का प्रचुर विनिवेशः**--

निशिभोजन—जबूद्वीप, भरतक्षेत्र का वर्णन ।

रविव्रत—समवशरण वर्णन ।

दानकथा—जबूद्वीप, भरतक्षेत्र का वर्णन ।

सम्यकत्वकौमुदी—जबूद्वीप, भरतक्षेत्र ।

रोहिणी व्रत कथा—जबूद्वीप, समवशरण का वर्णन ।

५ **नारी हृदय की व्रत विशेष के प्रति अभिरुचिः**—

विवेच्यकृति	**नारी**
निशिभोजन कथा	कमलश्री
रविव्रत कथा	गुणसुन्दरी
दान कथा	वृषभ सेना
सम्यकत्वकौमुदी	विजया
रोहिणी व्रत कथा	रोहिणी

६ **पाप अथवा पुण्य प्रभाव निरूपणः**—

निशिभोजन—पुण्यप्रभाव निरूपण—	पूरब पुण्य उदय अब सोय । ताके घर लक्ष्मी बहु होय ।।
रविव्रत कथाः—पापप्रभाव निरूपण—	कहे मुनीश्वर सुन हो राय । पाप करत नर नरकें जाय ।।

दानकथा—पुण्यप्रभाव निरूपरण—

एक दिना नृप पुण्य जोगतै,
तपरूपी रत्नो की खान।
युगचाररण मुनि आये नभ ते,
मानो आये युग शशिभान ।।

सम्यकत्वकौमुदी—पाप प्रभाव निरूपरण-

पाप वरणी परपच कियो,
ताको फल दुरगति होय।
सुरगमोक्ष को बैरी सोय ।।

रोहिरणी व्रत कथा-पाप प्रभाव निरूपरण—

दुरगधा दुख कहियो सबै, कहा पाप मे कीनो अब।
ताते मैं दुरगधा भई, हा–हा वचन कहत सो ठई ।।

७. मुनियों के धर्मोपदेश द्वारा जीवन के आचारमूलक सिद्धातो एव धार्मि प्रतिपादन —

निशिभोजन—भोजन समय—

दोय घडी जब दिन चढे,
तबते लेय अहार।
दोय घडी दिन के रहे,
तजो चार अहार ।।

रविव्रत—धर्म प्रभाव—

धर्म किये धन होई अपार,
धर्म एक तारै ससार।
मान दे धर्म करे जो कोई,
मुक्ति अगना पावै सोइ ।।

दान कथा—दान महत्व—

दान सुपात्रन को दियो, श्रेरिण नृपराय।
ताकर तीर्थ कर भये, सोलहवे सुखदाय ।।

सम्यकत्वकौमुदी धर्ममहत्व-

चन्द्र बिना नही सोभै रात।
धरम बिना ज्यो प्राणि जाति ।।

रोहिरणी व्रत कथा—नरकगति—

सो पुनि रौद्रध्यान मे मरी,
छट्ठे नरक जाय अवतरी।

पचम कर्म तीसरे दोय, प्रथम नर्क धरि भव भव सोय।
छेदन भेदन मुगदरमार, शूलारोपण दुख अपार।
जेते कष्ट नरक मे सहे, ते सब हम पर जात न कहे ।।

८ वैराग्य लेने का कारण:-

निशिभोजन— पारिवारिक अशांतता

ले भरता घर जाओ, तेरो हुकम चले सुखकार।
फिर सुन्दरि तब ऐसे कहै, मेरो इनसो काम न अहै।
मै तो जाहूँ अरू के माय, जिनवर दीक्षा ल्यो सुखदाय।

रविव्रत कथा—**ससार की** असारता एव जीव का अनेक योनियो मे परिभ्रमण—

स्वामी यह ससार असार, भटकत जीव न पावे पार ।
आवत जात बहुत दुख सहे, योनी सकट फिर २ लहे ।।

दानकथा —पति का पत्नी के प्रति सदेह एव तत्पश्चात् पश्चाताप की अभिव्यक्ति—

नारि वृषभ मेना तनो, ऐसे सुन विरतत ।
ताके ढिग राजा गयो, पश्चाताप करन्त ।।
तब ही वो सतनार, मन मे वैराग्य धार ।
गई ततकार वन, माहि मुनिपास जी ।

सम्यकत्वकौमुदी—सम्यकत्व प्राप्ति की कथाये सुनकर—

राणी आदिक होय सब, सबै सेठ जिय और ।
मत्री की जियै आद ले, लयो व्रत सुचि ठौर ।
उदैश्री अर्जका पाय, श्रावक व्रत लयो मन लाय ।

रोहिणीव्रतकथा—पूर्वजन्मान्तर सुनकर

सुनो भवान्तर अतिसुख भयो, तिनव्रत रोहिनी गुरु पै लयो ।
समवशरण बदे जिनराय, पूजा भक्ति करीचित लाय ।
नरकोठे मे आसन लयो, धर्म श्रवण चित अन्दर दयो ।
राय अशोक जुदीक्षा लई, तपबल गणधर ऋद्धि जु भई ।

६ समस्त कृतियो की रसयोजना का पर्यवसान शात रस मे निहित है ।

विशिष्ट लक्षण — (Individual Features)

विवेच्य कथाओ मे समान रचनाङ्गो के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट लक्षण भी मिलते है ।

१ अधिकारिक कथा के साथ अवातर कथा का भी समावेश

विवेच्यकृति	अधिकारिक कथा	अवातरकथा
सम्यकत्वकौमुदी	अर्हदास सेठ	सम्यकत्व प्राप्ति की सेठ की पत्नियो द्वारा सुनाई गई कथाये

२ वक्ता श्रोता प्रणाली द्वारा कथारभ—

विवेच्यकृति	वक्ता	श्रोता
सम्यकत्वकौमुदी कथा	गौतमगणधर	श्रेणिक महाराज
रोहिणी व्रत कथा	"	"

३. सूक्तिप्रयोग—

कृति	सूक्ति
निशिभोजन कथा—	केर वेर को सग
रविव्रत कथा—	वैल मरे कै सूखा परै ।
सम्यकत्वकौमुदी कथा—	होनहार होसी रही ।

जगत हितकर भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव की पावन वेला मे जीव मात्र के प्रति अनन्त शुभ कामनाएं

शेख मकबूल अहमद
अब्दुल रज्जाक

फ्रूट कमीशन एजेन्ट्स,
सब्जी मन्डी, सीकर (राज)

वर्द्धमान के २५००वें निर्वाणोत्सव के शुभावसर पर हम आपका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं

गुलाब अजमेरी

फ्रूट मर्चेन्ट
जाटिया बाजार, सीकर

श्री महावीर निर्वाणोत्सव के अवसर पर हम वीर प्रभु के चरणों में नत मस्तक होते हुए सभी के प्रति हार्दिक शुभ कामनाएं अर्पित करते हैं

मिल्लूमल मिरचूचन्द

फ्रूट मर्चेन्ट
जाटिया बाजार, सीकर

जीवो और जीन दो के प्रवर्तक प्रात. स्मरणीय भगवान महावीर का २५००वां निर्वाण दिवस सफल हो

सुलेमान जमाल

फ्रूट मर्चेन्ट
जाटिया बाजार, सीकर